बिगुल पुस्तिका–6

बुझी नहीं है अक्टूबर क्रान्ति की मशाल

(मज़दूर अख़बार 'नयी समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल' में प्रकाशित लेखों का एक संकलन)

राहुल फ़ाउण्डेशन

लखनऊ

ISBN 978-81-87728-10-8

मूल्य : रु. 15.00

प्रथम संस्करण : जनवरी, 2008

प्रकाशक : **राहुल फ़ाउण्डेशन**
69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज,
लखनऊ–226 006 द्वारा प्रकाशित

आवरण : **रामबाबू**

टाइपसेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन

मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस–28, शक्तिनगर, लखनऊ

Bujhi Nahin Hai October Kranti ki Mashal
Collection of Articles published in 'Bigul'

प्रस्तावना

1917 की महान अक्टूबर क्रान्ति विश्व इतिहास के एक नये युग के आगमन की घोषणा थी – सर्वहारा क्रान्तियों के युग के आगमन की घोषणा। यह पूरी दुनिया के ज्ञात इतिहास की सबसे युगप्रवर्तक घटनाओं में से एक थी। इस क्रान्ति में मेहनतकश अवाम ने मज़दूर वर्ग के नेतृत्व में रूस में पहली बार पूँजीपतियों और सभी सम्पत्तिवान लुटेरों की राज्यसत्ता को उखाड़ फेंका, और लेनिन और उनकी बोल्शेविक पार्टी के नेतृत्व में सर्वहारा राज्यसत्ता की स्थापना की।

यह सही है कि अक्टूबर क्रान्ति ने हर प्रकार के शोषण-उत्पीड़न-असमानता को ख़त्म कर एक सचमुच का मानवीय समाज बनाने की दिशा में जो यात्रा शुरू की थी वह 1953 में महान स्तालिन की मृत्यु हो जाने के बाद आगे जारी नहीं रह सकी और पूँजीवादी ताक़तों ने फिर से अपनी सत्ता बहाल कर ली लेकिन इस क्रान्ति का ऐतिहासिक महत्त्व और उसका ऐतिहासिक संवेग आज भी बरक़रार है। समाजवाद की विश्वव्यापी फ़ौरी पराजय का यह अर्थ नहीं कि सर्वहारा क्रान्ति का युग बीत गया। सर्वहारा वर्ग और पूँजीपति वर्ग के बीच विश्व-ऐतिहासिक महासमर का अभी पहला चक्र पूरा हुआ है। नया चक्र अब शुरू हुआ है। पूरी दुनिया में अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करणों का निर्माण अवश्यम्भावी है। अक्टूबर क्रान्ति की हवाएँ पूरी तरह मरी तो कभी नहीं थीं। पूरे भरोसे के साथ कहा जा सकता है कि आने वाले दिनों में वे फिर प्रचण्ड चक्रवाती तूफ़ान बनकर उठेंगी। इक्कीसवीं सदी भूकम्पकारी, उथल-पुथल की सदी होगी, यह हमारा गहरा विश्वास है।

यह विश्वास एक विज्ञानसम्मत आस्था बनकर मेहनतकश अवाम की संकल्पशक्ति को नये सिरे से जगा सके, इसके लिए ज़रूरी है कि अक्टूबर क्रान्ति के इतिहास और उसके मार्गदर्शक सिद्धान्त का गहराई से अध्ययन किया जाये। साम्राज्यवाद के मौजूदा दौर में मज़दूर क्रान्तियों का स्वरूप और रास्ता क्या होगा यह तय करना एक ज़रूरी कार्यभार है। बिगुल पुस्तिकाओं की शृंखला की यह कड़ी इसी दिशा में एक कोशिश है। पुस्तिका में प्रकाशित लेख बिगुल के विभिन्न अंकों में प्रकाशित हो चुके हैं। हमारा विश्वास है कि इस पुस्तिका की सामग्री अपने देश की ज़मीन पर मौलिक ढंग से अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण का निर्माण करने की दिशा में उपयोगी साबित होगी।

– सम्पादक, 'बिगुल'

अनुक्रम

अक्टूबर क्रान्ति की मशाल बुझी नहीं है! बुझ नहीं सकती! 5

अक्टूबर क्रान्ति का नया संस्करण ही मुक्ति का एकमात्र रास्ता है! 14

अक्टूबर की हवाएँ मरी नहीं हैं! वे फिर उठेंगी भयंकर तूफ़ान बनकर! 22

अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाएँ और हमारा समय, हमारा देश 27

आग्नेय अक्टूबर 40

अक्टूबर क्रान्ति की मशाल बुझी नहीं है! बुझ नहीं सकती!

अब से ठीक 79 वर्ष पहले, 1917 में (पुराने कैलेण्डर के अनुसार अक्टूबर में और नये कैलेण्डर के अनुसार नवम्बर में) मेहनतकश अवाम ने, क्रान्तिकारी मज़दूर वर्ग की अगुवाई में, रूस में पहली बार पूँजीपतियों और सभी सम्पत्तिवान लुटेरों की राज्यसत्ता को बलपूर्वक उखाड़ फेंका था और पहली बार महान लेनिन और उनकी बोल्शेविक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सर्वहारा राज्यसत्ता की – सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की स्थापना की थी।

मानव समाज के वर्गों में बँटने के बाद के हज़ारों वर्षों के इतिहास में यह पहली ऐसी क्रान्ति थी जिसमें राज्यसत्ता एक शोषक वर्ग से दूसरे, नये शोषक वर्ग के हाथ में नहीं बल्कि मेहनतकश शोषित-उत्पीड़ित जनता के हाथों में गयी थी।

इतिहास की पहली सचेतन संगठित क्रान्ति जिसने पहली बार उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व का नाश कर दिया और समता के साथ तरक़्क़ी की रफ़्तार का नया रिकॉर्ड क़ायम किया

दबे-कुचले लोगों ने पूरे मानव इतिहास में बग़ावतें तो अनगिनत बार की थीं लेकिन पेरिस कम्यून (1871 में पेरिस के मज़दूरों द्वारा सम्पन्न क्रान्ति और पहली सर्वहारा सत्ता की स्थापना, जिसे 72 दिनों बाद फ़्रांसीसी पूँजीपतियों ने पूरे यूरोप के प्रतिक्रियावादियों की मदद से कुचल दिया) की शुरुआती कोशिश के बाद, अक्टूबर क्रान्ति मेहनतकश वर्गों की पहली योजनाबद्ध, सचेतन तौर पर संगठित क्रान्ति थी जिसके पीछे एक दर्शन था, एक विचारधारा थी, एक कार्यक्रम था, एक युद्धनीति थी और एक ऐसे रास्ते की रूपरेखा भी थी जिससे होकर आगे बढ़ते हुए एक नये समाज की रचना करनी थी।

निजी सम्पत्ति और वर्ग-शोषण के अस्तित्व में आने के लगभग चार हज़ार वर्षों बाद पहली बार मेहनतकशों की सोवियत सत्ता ने अब तक असम्भव और महज़ किताबी माने जाने वाली बात को सम्भव बनाकर वास्तविकता की ज़मीन पर उतार दिया। लेनिन और फिर स्तालिन के नेतृत्व वाली सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में

स्थापित सर्वहारा सत्ता – सर्वहारा अधिनायकत्व ने अब तक सम्पत्ति का अपहरण करने वालों की ही सम्पत्ति का अपहरण कर लिया और फिर ज्ञात इतिहास में पहली बार उत्पादन के साधनों – यानी कल-कारख़ानों, खेतों, संचार-यातायात के साधनों आदि पर निजी स्वामित्व का ख़ात्मा कर दिया गया। इस सोच को ग़लत ही नहीं बल्कि उल्टा साबित कर दिया गया कि खेतों और कारख़ानों पर निजी मालिकाने के बिना समाज का कामकाज चल ही नहीं सकता। कामकाज चला ही नहीं बल्कि दौड़ा, और अद्‌भुत, चमत्कारी रफ़्तार से दौड़ा! उत्पादन और भौतिक प्रगति के सभी पुराने रिकॉर्ड टूट गये और मानदण्ड छोटे पड़ गये!

आज दुनियाभर का पूँजीवादी प्रेस समाजवाद पर चाहे जितना कीचड़ उछाल ले, तमाम झूठ-फ़रेब के बावजूद इस सच्चाई को उसे आज से पचास वर्षों पहले ही स्वीकारने के लिए मजबूर होना पड़ा था कि 1917 के बाद सोवियत संघ में वैज्ञानिक-मशीनी तरक़्क़ी और आम मेहनतकशों की चेतना, हुनर, शिक्षा, संस्कृति वग़ैरह की तरक़्क़ी की रफ़्तार इतनी तेज़ थी कि जो चीज़ें हासिल करने में पश्चिमी यूरोप के देशों को क़रीब दो सौ वर्षों का समय लगा वह उसने सिर्फ़ 20-25 वर्षों में हासिल कर लिया। फ़्रांसीसी क्रान्ति और इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति के बाद पश्चिमी दुनिया में जो भी तरक़्क़ी पूँजीवादी रास्ते से हासिल हुई थी, उसके साथ ही धनी-ग़रीब के बीच की खाई भी तेज़ रफ़्तार से बढ़ती चली गयी थी और पूँजीपतियों के जनवाद की यह असलियत सामने आती चली गयी थी कि वह धनिकों के बीच की स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृत्व है जबकि ग़रीबों-मेहनतकशों के ऊपर तानाशाही है। यह स्वाभाविक था, क्योंकि पश्चिम में सारी तरक़्क़ी जनता की ख़ुशहाली और न्याय के लिए नहीं बल्कि नयी-नयी मशीनों द्वारा मेहनतकशों को निचोड़कर ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के लिए पूँजीपतियों में लगी होड़ का नतीजा थी। दूसरी ओर सोवियत संघ में निजी मालिकाने के बलपूर्वक ख़ात्मे के बाद मुनाफ़ाख़ोरी और लूट के मूल एवं मुख्य आधार को ख़त्म करके मेहनतकश जनता की राज्यसत्ता ने आम लोगों को पहली बार अपनी तरक़्क़ी के लिए उत्पादन का अवसर दिया तथा साथ ही सांस्कृतिक-शैक्षिक तरक़्क़ी और ज़िन्दगी की हर तरह की बेहतरी के लिए भी ख़ुद अपनी पहल पर काम करने का मौक़ा दिया।

इसी का नतीजा था कि समाजवादी विकास ने जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने और पूरे सोवियत संघ को उन्नत औद्योगिक देशों की क़तार में ला खड़ा करने के साथ ही समाज में ज़्यादा से ज़्यादा समानता स्थापित की और हज़ारों वर्षों से क़ायम विशेषाधिकारों, भौतिक-सांस्कृतिक अन्तरों और उनकी ज़मीन के मौजूद रहने के बावजूद पूँजीपतियों, भूस्वामियों, नौकरशाहों, सट्टेबाज़ों, व्यापारियों आदि सभी तरह के परोपजीवी वर्गों के प्रत्यक्ष शोषण को दो दशकों के भीतर ही समाप्त कर दिया। समाजवाद के रास्ते ने उद्योगों और खेतीबाड़ी की अभूतपूर्व तरक़्क़ी के साथ ही निःशुल्क एवं समान शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास आदि सुविधाओं को सर्वसुलभ बना दिया तथा बेरोज़गारी का पूरी तरह

ख़ात्मा कर दिया। ग़ौरतलब बात यह है कि उद्योगों पर समूची जनता का मालिकाना स्थापित करके (यानी मेहनतकशों की राज्यसत्ता के अन्तर्गत राष्ट्रीकरण करके) और खेती का सामूहिकीकरण करके (यानी खेतों में काम करने वाले सभी किसानों के सामूहिक मालिकाने वाले बड़े फ़ार्म स्थापित करके) सोवियत संघ ने ऊपर गिनायी गयीं उपलब्धियाँ उस समय हासिल कीं जब पूरी पूँजीवादी दुनिया महामन्दी (1930-40 के बीच) के भँवरों में पछाड़ खा रही थी।

स्तालिन के भूत से आज भी क्यों डरते हैं पूँजीपति और क्यों उन्हें आज भी गाली देते हैं उनके भाड़े के टट्टू?

समाजवाद के महान निर्माता स्तालिन के बारे में आज पूँजीवादी अख़बारों के दो कौड़ी के भाड़े के टट्टू भी तरह-तरह के झूठ गढ़ रहे हैं। हम उन्हें सिर्फ़ याद दिलाना चाहते हैं कि कभी पूँजीवादी दुनिया के एच.जी. वेल्स, रोम्याँ रोलाँ, बर्नार्ड शॉ, बर्ट्रेण्ड रसेल, चार्ली चैप्लिन आदि और भारत के लाला लाजपत राय, गणेश शंकर विद्यार्थी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, नेहरू, प्रेमचन्द आदि जैसे महापुरुषों ने भी स्तालिन और सोवियत संघ की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। हम यह भी याद दिलाना चाहते हैं कि साम्राज्यवादी कुत्तों की गलाकाटू होड़ ने जब दूसरे महायुद्ध को और फ़ासिस्ट-नात्सी भस्मासुरों को जन्म दिया तो हिटलर की सिर्फ़ 54 डिवीज़नों ने लगभग पूरे यूरोप को रौंदकर विश्वविजय का ख़तरा पैदा कर दिया था। उस समय उसकी 200 डिवीज़नों का मुक़ाबला करते हुए सोवियत जनता और लाल सेना ने हिटलर की पूरी सत्ता को ही तबाह कर डाला था। इसमें दो करोड़ सोवियत जनता ने अपनी बेमिसाल क़ुर्बानी स्तालिन की बहुप्रचारित "तानाशाही" के डर से नहीं बल्कि समाजवाद और विश्व मानवता की हिफ़ाज़त के लिए दी थी। उस समय तो रूज़वेल्ट, चर्चिल और दगॉल भी स्तालिन की बड़ाई कर रहे थे और पीछे-पीछे चल रहे थे तथा पश्चिमी अख़बार उन्हें "चाचा स्तालिन" ('अंकल जो') कह रहे थे, पर विश्वयुद्ध समाप्त होते ही स्तालिन को फिर तानाशाह कहा जाने लगा और सोवियत संघ नामक "शैतानी राज्य" को तबाह कर दिये जाने का आह्वान किया जाने लगा। यह है पूँजीवाद का दोगलापन, जो स्वयंसिद्ध है।

पर दुनिया के पूँजीवादी इतिहासकार आज भी इस तथ्य से इन्कार नहीं कर पाते कि अक्टूबर क्रान्ति के तोपों के धमाकों ने दुनियाभर के मेहनतकशों को पूँजी की सत्ता के विरुद्ध लड़ने की प्रेरणा देने के साथ ही एशिया, अफ़्रीका और लातिन अमेरिका की जनता के उपनिवेशवाद विरोधी संघर्षों को भी ज़बरदस्त उछाल देने का काम किया। सोवियत संघ लगातार औपनिवेशिक ग़ुलामी के विरुद्ध लड़ने वाले क्रान्तिकारियों को और आम जनता को प्रेरणा देता रहा और यथासम्भव मदद भी। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पूर्वी यूरोप में भी सर्वहारा सत्ताएँ स्थापित हुईं और चीन में माओ और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में हुई नयी जनवादी क्रान्ति ने अक्टूबर क्रान्ति के बाद एक और, नया मील

का पत्थर क़ायम किया। शक्तिशाली समाजवादी खेमे की मौजूदगी ने एशिया, अफ़्रीका, लातिन अमेरिकी देशों की जनता पर क़ायम औपनिवेशिक और नवऔपनिवेशिक शिकंजे को ढीला करने में भी अहम भूमिका निभायी।

पर इतिहास कभी भी सीधी रेखा में आगे नहीं बढ़ता। यह आती-जाती लहरों के रूप में, ज्वार और भाटे के रूप में आगे बढ़ता है, सर्पिल रास्तों से होकर, अनेकों मोड़ों और घुमावों से होकर आगे बढ़ता है।

समाजवाद की फ़िलहाली हार के बुनियादी कारण क्या हैं? यह जानना बेहद ज़रूरी है!

समाजवादी समाज पूरी तरह वर्गविहीन, शोषणविहीन समाज नहीं होता, बल्कि इसकी शुरुआती अवस्था होता है। वह पूँजीवाद और कम्युनिज़्म के बीच का – वर्ग समाज और वर्गविहीन समाज के बीच का काल होता है; कम्युनिज़्म की सिर्फ़ प्रथम अवस्था होता है। मेहनतकश वर्ग इस दौरान बलपूर्वक सम्पत्तिवान, परजीवी वर्गों पर शासन क़ायम करके उत्पादन के साधनों पर से उनका स्वामित्व छीन लेता है; पर ये पुराने शोषक-शासक अपनी उसी लुटेरी मानसिकता और अपने "खोये हुए स्वर्ग" को फिर से पाने की चाहत के साथ समाज में मौजूद होते हैं। इसके साथ ही छोटे पैमाने पर (गाँव के मँझोले व छोटे किसानों, छोटे उद्यमियों-कारोबारियों आदि के बीच) पूँजीवादी क़िस्म का उत्पादन समाजवाद के शुरुआती समयों में लम्बी अवधि तक मौजूद रहता है, निजी स्वामित्व छोटे पैमाने पर मौजूद रहता है और आम जनता के एक अच्छे-ख़ासे हिस्से के भीतर धनी बनने की और मुनाफ़ा कमाने की पुरानी बीमारी भी मौजूद रहती है। यह छोटे पैमाने का पूँजीवादी उत्पादन नये-नये पूँजीवादी तत्त्वों और मानसिकता को समाजवाद के भीतर नये सिरे से पैदा भी करता रहता है। इसके अलावा समाजवादी समाज में भी शारीरिक श्रम और मानसिक श्रम करने वालों के बीच, कारख़ानों में काम करने वाले और खेतों में काम करने वालों के बीच तथा गाँव में रहने वालों और शहर में रहने वालों के बीच का अन्तर भी मौजूद रहता है। इसके अतिरिक्त, समाजवाद के बहुत आगे की मंज़िलों में ही यह सम्भव हो सकता है कि लोग क्षमता मुताबिक़ काम करते हैं और ज़रूरत मुताबिक़ पाते हैं। शुरू में तो लम्बे समय तक यही हो सकता है कि लोग जितना श्रम करें उसी के हिसाब से उन्हें मज़ूरी मिले। अब चूँकि लोगों की श्रम करने की प्राकृतिक क्षमता एक नहीं होती, इस कारण से भी समाजवाद के शुरुआती लम्बे समय में असमानता पैदा होने का एक आधार मौजूद रहता है।

कुल मतलब यह कि उत्पादन के साधनों पर पूरे समाज का मालिकाना क़ायम करना शोषण और असमानता के ख़ात्मे का सबसे ज़रूरी पहला क़दम है, पर यही सब कुछ नहीं। इसके बाद भी समाज में असमानता और पूँजीवाद के उतने क़िस्म के उत्पादन केन्द्र और पालन-पोषण केन्द्र मौजूद रहते हैं, जो ऊपर गिनाये गये हैं। इन्हीं

कारणों से समाजवादी समाज के भीतर भी नये क़िस्म के पूँजीवादी तत्त्व मज़बूत होते जाते हैं और समय रहते इन खरपतवारों को नष्ट करके ज़मीन की अच्छी तरह निराई-गुड़ाई और कीटनाशकों का छिड़काव न किया जाये तो यह समाजवाद की पूरी फ़सल तबाह कर डालते हैं। ये नये पूँजीवादी तत्त्व कम्युनिस्ट पार्टी और सर्वहारा राज्यसत्ता पर क़ाबिज़ हो जाते हैं और पूँजीवाद की पुनर्स्थापना हो जाती है।

1953 में स्तालिन की मृत्यु के बाद सोवियत संघ में यही हुआ। ख्रुश्चेव के नेतृत्व में वहाँ एक नये क़िस्म का पूँजीवाद बहाल हो गया – "समाजवादी" मुखौटे और नक़ली लाल झण्डे वाला, सरकारी या राजकीय पूँजीवाद – बहुत कुछ हमारे देश के 'पब्लिक सेक्टर' जैसा! 1990 में यह मुखौटा भी गिर गया और महान अक्टूबर क्रान्ति के देश में एक बार फिर खुला पूँजीवाद बहाल हो गया।

सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति ने दिखलायी नयी राह!

दरअसल महान स्तालिन भी समाजवाद के भीतर मौजूद और नये सिरे से पनपने वाले बुर्जुआ तत्त्वों को पहचान नहीं सके, उनके द्वारा समाजवाद की हार के ख़तरे को देख नहीं सके और उनके विरुद्ध सतत क्रान्ति चलाते हुए कम्युनिज़्म की दिशा में आगे बढ़ने की राह नहीं निकाल सके। इस दिशा में महान लेनिन ने सोचना ज़रूर शुरू किया था, पर वक़्त ने उन्हें मौक़ा नहीं दिया और 1924 में उनका निधन हो गया। स्तालिन की ग़लतियों ओर चीन के समाजवादी प्रयोगों से सबक़ लेकर माओ त्से-तुङ ने इस महान काम को अंजाम दिया और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति का वह प्रयोग किया जो विश्व सर्वहारा क्रान्ति के डेढ़ सौ वर्षों के इतिहास में पेरिस कम्यून और अक्टूबर क्रान्ति के बाद क़ायम तीसरा कीर्ति स्तम्भ है। हालाँकि चीन में भी माओ की मृत्यु के बाद पूँजीवादी तत्त्व सत्ता पर क़ाबिज़ हो गये और पूँजीवाद की पुनर्स्थापना हो गयी, पर इससे सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति का महत्त्व कम नहीं होता क्योंकि पहली बार इस महान क्रान्ति ने पूँजीवादी पुनर्स्थापना को रोकने, पूँजीवादी तत्त्वों को लगातार कमज़ोर करते जाने और वर्गविहीन समाज की दिशा में आगे बढ़ते जाने की ठोस, स्पष्ट राह बतलायी थी।

मेहनतकश अवाम अगर इतिहास से शिक्षा लेकर क्रान्ति के विज्ञान की समझ नहीं हासिल करेगा तो पूँजीपति वर्ग और उसके भोंपुओं के भ्रामक प्रचारों से मुक्त नहीं हो पायेगा और यह मानता रहेगा कि समाजवाद की हार हो गयी है, वह असफल सिद्ध हो गयी। पूँजीवादी समाज की विपत्तियों से तंग, परेशान-बदहाल होकर वह समय-समय पर विद्रोह भी करता रहेगा, लेकिन समाजवाद की अन्तिम जीत में विश्वास और क्रान्ति के विज्ञान की समझ के अभाव में वह कभी भी पूँजीवाद का नाश नहीं कर सकेगा क्योंकि पूँजीवाद का एकमात्र विकल्प समाजवाद ही है।

अमर नहीं है पूँजीवाद! इसे मरना ही है!

हमें इस बात को अच्छी तरह से समझना होगा कि अतीत में भी क्रान्तियों के शुरुआती संस्करण असफल होते रहे हैं। सात-आठ सौ वर्षों तक कई दास विद्रोह कुचल दिये गये, तब कहीं जाकर दास प्रथा के युग का पूरी दुनिया से ख़ात्मा हो सका था। सामन्तवर्ग से संघर्ष करते हुए निर्णायक विजय हासिल करने में और पूँजीवादी सामाजिक ढाँचे का निर्माण करने में पूँजीपति वर्ग को तक़रीबन चार सौ वर्षों का समय लग गया। फिर इसमें निराश या भग्नहृदय होने की भला क्या बात हो सकती है कि समाजवादी क्रान्ति फ़िलहाल कुछ समय के लिए सदियों से जड़ जमाये पूँजीवाद से हार गयी है और सर्वहारा वर्ग को फ़ौरी तौर पर पीछे हट जाना पड़ा है! और फिर हमें यह भी तो याद रखना होगा कि समाजवादी क्रान्ति मानव इतिहास की सर्वाधिक व्यापक, गहरी और बुनियादी क्रान्ति है, क्योंकि पहले की सभी क्रान्तियों ने एक पुरानी पड़ चुकी शोषण की व्यवस्था की जगह एक नये प्रकार की शोषण की व्यवस्था की स्थापना की जबकि समाजवादी क्रान्ति का लक्ष्य सभी वर्ग व्यवस्थाओं का, हर तरह के शोषण का और हर तरह की असमानता का नाश करना है। राज्यसत्ता पर सर्वहारा वर्ग के क़ाबिज़ होने के बाद लम्बे समय के संघर्ष में ही यह सम्भव हो सकता है और इस लम्बे संक्रमण काल के दौरान एक से अधिक बार सर्वहारा वर्ग को हार का सामना भी करना पड़ सकता है।

हमें यह बात ठीक से समझ लेनी होगी कि प्रकृति और समाज की कोई भी चीज़, कोई भी ऐतिहासिक युग और कोई भी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था अमर नहीं होती। पूँजीवाद भी अजर-अमर नहीं है। दास प्रथा और सामन्त प्रथा की तरह पूँजी की उजरती ग़ुलामी की प्रथा भी आज मानव समाज के पैरों की बेड़ी बन चुकी है जो उसको आगे नहीं बढ़ने दे रही है। अतः, निश्चित ही, मानवता इन बेड़ियों को तोड़ फेंकेगी।

समूचे विश्व पूँजीवाद और इसके शीर्ष पर आसीन साम्राज्यवादी देशों तक की अर्थव्यवस्था आज एक लम्बी मन्दी और ठहराव के ऐसे ढाँचागत संकट से ग्रस्त है जैसा पहले कभी नहीं देखा गया था। हालात बताते हैं कि इसकी मृत्यु अब सुदूर भविष्य की बात नहीं है। तब तक यह केवल घिसट-घिसटकर साँसें गिन सकता है जब तक कि मेहनतकश अवाम फिर से संगठित होकर इसके नाश की लड़ाई न छेड़ दे।

हालाँकि पूरी दुनिया में अभी क्रान्ति की लहर पर प्रतिक्रान्ति की लहर हावी है, पर दुनिया के अलग-अलग कोनों से एक नये उभार के पूर्वसंकेत मिलने शुरू हो चुके हैं। रूस, भूतपूर्व सोवियत संघ के दूसरे घटक देशों में, और पूर्वी यूरोप के देशों में मेहनतकश जनता ने नक़ली समाजवाद का गन्दा चेहरा तो पहले ही देख लिया था, अब वह पश्चिमी दुनिया के "स्वर्ग" की असलियत भी जान चुकी है। विश्व पूँजीवादी व्यवस्था के साथ मिलते ही इन देशों की कमज़ोर पूँजीवादी अर्थव्यवस्था गम्भीर संकट के भँवर में जा फँसी है तथा बेरोज़गारी, महँगाई, अभाव और भ्रष्टाचार की मार झेलती

और मुट्ठीभर लोगों के धनी होने की क़ीमत अपनी कंगाली से चुकाती जनता एक बार फिर सड़कों पर उतर चुकी है। उसके एक अच्छे-ख़ासे हिस्से के हाथ में आज लेनिन और स्तालिन के पोस्टर और लाल परचम हैं और लबों पर सच्चे समाजवाद की बहाली के नारे हैं। वहाँ कई क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट संगठन नयी अक्टूबर क्रान्ति की रणनीति पर बहसें चला रहे हैं और पश्चिम के पूँजीवादी अख़बार भी इन देशों में "बोल्शेविक पुनरुत्थान" की ख़बरें छाप रहे हैं। माओ के देश की जनता भी सोई नहीं है। वहाँ देङ सियाओ-पिङ के "बाज़ार समाजवाद" नामधारी पूँजीवाद के ख़िलाफ़ किसानों ओर युवाओं की बग़ावतें हो रही हैं और बदनाम करने की तमाम कोशिशों के बावजूद जनता महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दिनों को याद कर रही है!

ज़ाहिर है कि सन्नाटा टूटने लगा है। मिट्टी में दबे अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण के बीज अंकुरित होने लगे हैं।

लातिन अमेरिकी देशों में किसानों-मज़दूरों के आन्दोलन और छापामार संघर्षों का नया सिलसिला शुरू हो चुका है। और अब एशिया भी जग रहा है। इण्डोनेशिया के ताज़ा जन-उभार से हुई शुरुआत की आहटें भारतीय उपमहाद्वीप तक में सुनायी पड़ रही हैं। भारत की जनता भी सोई नहीं रह सकती। नयी आर्थिक नीतियों के अमल ने साम्राज्यवाद और देशी पूँजीवाद की लूट और लगातार बढ़ती महँगाई-बेरोज़गारी-असमानता और भ्रष्टाचार को जिन आख़िरी हदों तक पहुँचा दिया है, वहाँ पहुँचना एक जागते ज्वालामुखी के दहाने पर पहुँचने के समान है।

ज़ाहिरा तौर पर, भारतीय मेहनतकश अवाम को भी अपना ऐतिहासिक मिशन पूरा करने के लिए आगे क़दम बढ़ाना होगा। यह पूरी दुनिया की तरह भारत में भी एक नये सर्वहारा पुनर्जागरण और नये सर्वहारा ज्ञानोदय का दौर है। आर्थिक नवउपनिवेश-वाद के इस नये दौर में भारतीय सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जनता को साम्राज्यवाद और उसके जूनियर पार्टनर बने भारतीय पूँजीपति वर्ग की राज्यसत्ता को उखाड़कर पूँजीवादी उत्पादन प्रणाली को ही नष्ट कर देना है तथा राज्यसत्ता उत्पादन और समाज के पूरे तन्त्र पर अपना नियन्त्रण स्थापित कर लेना है। यही क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य के नारे का मतलब है। यही है भारत की नयी समाजवादी क्रान्ति जो आज की नयी परिस्थितियों के अनुरूप अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति का एक नया संस्करण है।

भारत के मेहनतकशों को अक्टूबर क्रान्ति के दिखाये मार्ग पर आगे बढ़ना होगा, नये सिरे से अपनी नयी, नये ढंग की इन्क़लाबी पार्टी बनानी होगी और अपने देश की ज़मीन पर मौलिक ढंग से अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण की आधारशिला स्थापित करनी होगी।

इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए ज़रूरी है कि हम दुनिया की पहली समाजवादी क्रान्ति के प्रयोग के सारतत्त्व को, उसके निचोड़ को, उसकी सबसे बुनियादी शिक्षाओं को गाँठ बाँध लें। वे क्या हैं?

अक्टूबर क्रान्ति की सबसे बुनियादी शिक्षाएँ

1. सर्वहारा क्रान्ति की सबसे पहली ज़रूरत है सर्वहारा वर्ग की, पूरे देश के स्तर पर संगठित एक क्रान्तिकारी पार्टी। यह क्रान्तिकारी पार्टी लेनिन के मार्गदर्शन में निर्मित बोल्शेविक पार्टी की तरह संघर्षों की आग में तपकर इस्पात बनी हो, पूँजीवाद की सशस्त्र सेना-पुलिस से लैस राज्यसत्ता से लोहा लेने में सक्षम हो (न कि महज़ चुनावबाज़ी और ट्रेडयूनियनबाज़ी का धन्धा करती हो), औद्योगिक सर्वहारा और ग्रामीण सर्वहारा में ही नहीं बल्कि बहुसंख्यक ग़रीब व परेशानहाल मँझोले किसानों में भी इसकी गहरी पैठ हो और यह अपने देश की परिस्थितियों की समझ के आधार पर क्रान्ति का कार्यक्रम और रास्ता तय करने में सक्षम हो, तभी यह अक्टूबर क्रान्ति का नया संस्करण तैयार कर सकती है।

2. जब हम अक्टूबर क्रान्ति के पहले के रूस में क़रीब बीस वर्षों तक जारी, ऐसी पार्टी के निर्माण और गठन की प्रक्रिया पर निगाह डालते हैं तो यह सच्चाई दिन की रोशनी की तरह साफ़ हो जाती है कि कठिन विचारधारात्मक संघर्ष, अटल विचारधारात्मक दृढ़ता और गहरी विचारधारात्मक समझ के बिना कोई सच्ची सर्वहारा पार्टी क्रान्ति करना तो दूर, गठित ही नहीं हो सकती और यदि गठित हो भी गयी तो जल्दी ही बिखर जायेगी। लेनिन और उनके साथी बोल्शेविकों ने एकदम अलग-थलग पड़ जाने का ख़तरा मोल लेते हुए भी विचारधारा के प्रश्न पर कोई समझौता नहीं किया और मार्क्सवाद की क्रान्तिकारी विचारधारा में किसी भी तरह की मिलावट की मेंशेविकों और कार्ल काउत्स्की के चेलों की साज़िशों को एकदम से ख़ारिज कर दिया। उन्होंने पार्टी को कभी भी चवन्निया मेम्बरी वाली महज़ चुनावबाज़, यूनियनबाज़, धन्धेबाज़ संगठन नहीं बनने दिया। दाँवपेंच के रूप में लेनिन की पार्टी ने पूँजीवादी चुनावों और संसद का भी इस्तेमाल किया और ट्रेडयूनियनों में काम करते हुए आर्थिक संघर्ष भी लगातार चलाये तथा जनता को जगाने के लिए विभिन्न प्रकार की राजनीतिक सुधारपरक कार्रवाइयाँ भी कीं, पर पार्टी ने इस बात को कभी नहीं भुलाया कि बिना बल-प्रयोग और हिंसा के, महज़ चुनावों के ज़रिये शोषक वर्गों से सत्ता छीनी नहीं जा सकती। वे पूँजीवादी राज्यसत्ता की सैन्य शक्ति और दमनतन्त्र को उखाड़ फेंकने के लिए क्रान्तिकारी तैयारी लगातार करते रहे और एक बार फिर अक्टूबर क्रान्ति ने इस बात को सही साबित किया कि शोषक वर्ग कभी भी समझाने-बुझाने या अल्पमत-बहुमत से सत्ता नहीं सौंप सकते। अक्टूबर क्रान्ति की इस शिक्षा को याद रखने का मतलब यह है कि भारत का सर्वहारा वर्ग भी भा.क.पा., मा.क.पा., भा.क.पा. मा-ले (लिबरेशन ग्रुप) और ऐसे तमाम सुधारवादी, अर्थवादी, पूँजीवादी संसदवादी कम्युनिस्ट संगठनों के भ्रमजाल से बाहर आकर कम्युनिज़्म के सही क्रान्तिकारी चरित्र को पहचाने। ये सभी मदारी मेंशेविकों और काउत्स्कीपन्थियों के उन सिद्धान्तों को ही नये लेबल लगाकर पेश करते हैं जिनके ख़िलाफ़ लगातार लड़कर बोल्शेविक पार्टी ने विचारधारात्मक दृढ़ता हासिल की और

तभी जाकर अक्टूबर क्रान्ति विजयी हो सकी।

3. साथ ही, अक्टूबर क्रान्ति और उसके नेता लेनिन की यह भी शिक्षा है कि क्रान्ति मुट्ठीभर समझदार और बहादुर क्रान्तिकारी नहीं, बल्कि व्यापक मेहनतकश जनता करती है। बहादुर और समझदार क्रान्तिकारी उस मेहनतकश जनता के हरावल दस्ता होते हैं जो जनता के रोज़मर्रा की छोटी-छोटी लड़ाइयों में हिस्सा लेते हुए, ट्रेडयूनियनों (बुर्जुआ और प्रतिक्रियावादी ट्रेडयूनियनों में भी) भागीदारी करके आर्थिक माँगों पर और साथ ही राजनीतिक माँगों पर भी लड़ते हुए, सम्भव होने पर रणकौशल के तौर पर पूँजीवादी चुनाव और संसद में भी भागीदारी करते हुए जनता की राजनीतिक चेतना का ज़्यादा से ज़्यादा क्रान्तिकारीकरण करते हैं और उसे शासक वर्गों के विरुद्ध निर्णायक संघर्ष के लिए तैयार करते हैं। अर्थवाद और संसदवाद के विरोध के नाम पर इन सभी रूपों-रणकौशलों को छोड़कर किसी भी रूप में महज़ हथियारबन्द कार्रवाइयों पर ज़ोर देना वामपन्थी दुस्साहसवाद, या "अतिवामपन्थ" का मध्यमवर्गीय भटकाव है जिसका फ़ायदा अन्ततोगत्वा भाकपा-माकपा ब्राण्ड नक़ली कम्युनिस्टों और पूँजीवादी सत्ता को ही मिलता है।

4. अक्टूबर क्रान्ति का निचोड़ निकालते हुए लेनिन ने सैकड़ों बार विचारधारात्मक दृढ़ता को स्पष्ट किया था और कहा था कि वर्ग-संघर्ष और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को कभी न भूलो। इनको भूलने का मतलब ही है पूँजीवादी जनवाद और शान्तिपूर्ण संक्रमण के भ्रमजालों में जा फँसना और क्रान्ति के मार्ग को भूल जाना। हालात में चाहे जो भी बदलाव आ जाये, यदि पूँजीवाद पूँजीवाद है तो इसका अर्थ है कि राज्यसत्ता पूँजीपति वर्ग के हाथों में है, जिसे सिर्फ़ बलपूर्वक ही उखाड़ा जा सकता है और शोषक वर्गों को तब तक बलपूर्वक दबाये रखना पड़ेगा जब तक कि वर्ग के रूप में उनका अस्तित्व क़ायम रहेगा। आगे चलकर अक्टूबर क्रान्ति की इस शिक्षा को माओ ने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पुष्ट करने के साथ ही आगे विकसित किया और बताया कि सर्वहारा वर्ग राज्यसत्ता पर क़ाबिज़ होने के बाद एक लम्बे समय तक यदि अपने अधिनायकत्व के अन्तर्गत सभी पूँजीवादी तत्त्वों के विरुद्ध सतत क्रान्ति नहीं चलायेगा और पूँजीवादी मूल्यों-विचारों-संस्थाओं के विरुद्ध सतत सांस्कृतिक क्रान्ति नहीं चलायेगा तो पूँजीवाद की पुनर्स्थापना अवश्यम्भावी होगी।

अक्टूबर क्रान्ति की मशाल से पूँजीवादी जंगल राज में दावानल भड़काने के लिए इन शिक्षाओं को दिल में भलीभाँति बैठा लेना होगा, हर तरह के कठमुल्लेपन से मुक्त होकर आज की दुनिया और अपने देश की पूँजीवादी उत्पादन प्रणाली, सामाजिक संरचना और राज्यतन्त्र की सही समझ क़ायम करनी होगी और लगातार क्रान्तिकारी कार्रवाइयों में धीरज तथा मुस्तैदी के साथ सन्नद्ध होकर एक ऐसी क्रान्तिकारी पार्टी का पुनर्गठन करना होगा जो अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण के निर्माण में सक्षम हो।

('बिगुल', नवम्बर-दिसम्बर 1996 में प्रकाशित)

अक्टूबर क्रान्ति का नया संस्करण ही मुक्ति का एकमात्र रास्ता है!

पूरी दुनिया के ज्ञात इतिहास की सबसे युग-प्रवर्तक घटनाओं में से एक – महान सोवियत समाजवादी क्रान्ति के बाद अस्सी साल का लम्बा समय बीत चुका है। इस बीच इतिहास वर्ग-संघर्ष की अपनी धुरी पर घूमता हुआ, एक चक्कर पूरा करके अगले चक्कर में प्रवेश कर रहा है।

इक्कीसवीं सदी की दहलीज़ पर खड़े सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जनसमुदाय ने पिछले क़रीब डेढ़ सौ सालों के दौरान के सबसे संगीन अँधेरे से गुज़रते हुए, पूँजीवाद के अत्यन्त उन्नत क़िस्म के शोषण और अत्यन्त संगठित क़िस्म के उत्पीड़न के ख़िलाफ़, दुनिया के अलग-अलग कोनों में लगातार बग़ावतें खड़ी करके यह संकेत देना शुरू कर दिया है कि वह एक बार फिर विश्व पूँजीवाद के ताबूत में आख़िरी कील ठोंकने के मंसूबे बाँध रहा है। इतिहास का अन्त नहीं हुआ है। न तो पूँजीवाद की आज की जीत अन्तिम है और न ही समाजवाद की आज की हार। यह तो युद्ध का महज़ एक चक्र था। युद्ध का अगला, फ़ैसलाकुन दौर तो अब लड़ा जायेगा!

पेरिस कम्यून (1871) के 72 दिनों की सर्वहारा सत्ता को यूरोप के पूँजीपतियों ने भले ही ख़ून के दलदल में धँसा दिया, लेकिन दुनियाभर के मेहनतकशों के सामने यह सच्चाई आ ही गयी कि पूँजीवाद को उखाड़कर मेहनतकशों की सत्ता क़ायम करना मुमकिन है। पेरिस कम्यून ने न सिर्फ़ कार्ल मार्क्स के वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धान्त को सही साबित किया बल्कि यह ज़रूरी शिक्षा भी दी कि सर्वहारा वर्ग पूँजीवादी राज्यसत्ता की बनी-बनायी मशीनरी पर क़ब्ज़ा करने के बजाय उसे चकनाचूर करके अपनी राज्यसत्ता की मशीनरी का निर्माण ख़ुद करेगा, तभी सफल हो सकेगा।

महान अक्टूबर क्रान्ति ने पेरिस कम्यून की नसीहत को अमली जामा पहनाने के साथ ही यह साबित कर दिखाया कि दुनिया की तमाम सम्पदा का उत्पादक मेहनतकश जनसमुदाय सर्वहारा वर्ग की अगुवाई में और उसके हरावल दस्ते – एक सच्ची, इन्क़लाबी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में स्वयं शासन-सूत्र भी सँभाल सकता है तथा अपने भाग्य और भविष्य का नियन्ता स्वयं बन सकता है।

महान अक्टूबर क्रान्ति ने यह साबित किया कि मालिक वर्गों को समझा-बुझाकर

नहीं बल्कि उनकी सत्ता को बलपूर्वक उखाड़कर और उन पर बलपूर्वक अपनी सत्ता (सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व) क़ायम करके ही पूँजीवाद के जड़मूल से नाश की प्रक्रिया शुरू की जा सकती है और समाजवाद का निर्माण किया जा सकता है।

सदियों पुरानी धारणाओं को तोड़कर अक्टूबर क्रान्ति ने साबित कर दिया कि मेहनतकश राजकाज भी चला सकते हैं और निजी स्वामित्व को समाप्त करके प्रगति की चमत्कारी रफ़्तार हासिल की जा सकती है।

अक्टूबर क्रान्ति ने पूँजीपतियों और उनके पहले के तमाम मालिकों द्वारा हज़ारों वर्षों के दौरान जनता में कूट-कूटकर भरी गयी इस बात को झूठा साबित किया कि मेहनतकश लोग सिर्फ़ काम कर सकते हैं, "ज्ञानी" लोगों की मदद से राजकाज चलाना तो मालिक लोगों का काम है। राज्यसत्ता पर क़ाबिज़ होने के बाद महान लेनिन की बोल्शेविक पार्टी के नेतृत्व में सोवियत संघ के मज़दूरों और मेहनतकश जनता ने न केवल पश्चिमी पूँजीवादी देशों के संयुक्त हमले का मुक़ाबला किया और उनके समर्थन से तोड़फोड़ की कार्रवाइयों में लगे देशी प्रतिक्रियावादियों को कुचल डाला, बल्कि भुखमरी और अकाल झेलकर भी साम्राज्यवादियों की आर्थिक नाकेबन्दी के सामने घुटने नहीं टेके और दिन-रात एक करके समाजवादी अर्थव्यवस्था का निर्माण किया। दस वर्षों के भीतर उत्पादन के साधनों पर निजी मालिकाने का ख़ात्मा करके विविध रूपों में सामाजिक मालिकाना क़ायम कर दिया गया।

जल्दी ही, शुरुआती संकटों से उबरकर समाजवाद आगे को लम्बे डग भरने लगा। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान, उद्योग और कृषि के क्षेत्र में उत्पादन-वृद्धि के ऐसे रिकॉर्ड क़ायम हुए जिन्होंने औद्योगिक क्रान्ति को भी मीलों पीछे छोड़ दिया। यह पूँजीवादी प्रचार एकदम झूठा साबित हुआ कि सर्वहारा वर्ग के राज्य के मालिकाने वाले कारख़ाने और सामूहिक खेती में उत्पादन का काम सुचारु रूप से चल ही नहीं सकता। काम न केवल सुचारु रूप से चला, बल्कि उत्पादन-वृद्धि की ऐसी रफ़्तार दुनिया ने पहले कभी नहीं देखी थी। और यही नहीं, मज़दूरों ने सामूहिक तौर पर मैनेजमेण्ट के कामों को भी ज़्यादा से ज़्यादा ख़ुद सँभाल लिया और ख़ुद ही मशीनों में सुधार की नयी-नयी तरकीबें भी ईजाद करने लगे। समाजवाद के वैज्ञानिकों ने बिना पश्चिमी मदद के नये-नये आविष्कार करके सदियों पीछे छूट गये रूस को बीस वर्षों के भीतर पश्चिमी देशों की टक्कर में ला खड़ा किया।

केवल आर्थिक प्रगति और समानता के स्तर पर ही नहीं, सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर भी सोवियत संघ ने चमत्कारी उपलब्धियाँ हासिल कीं, जिन्हें पश्चिमी पूँजीवादी देशों के बुर्जुआ बुद्धिजीवियों और अख़बारों को भी स्वीकार करना पड़ा। वेश्यावृत्ति और यौनरोगों का और बलात्कार जैसे अपराधों का पूरी तरह ख़ात्मा हो गया। शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधा पूरी आबादी को समान स्तर पर मुहैया की जाने लगी। आम मज़दूरों के लिए तरह-तरह के नाटक, फ़िल्म व सांस्कृतिक कार्यक्रम तैयार किये जाने लगे और

उन्हें मनोरंजन और घर-परिवार के लिए पर्याप्त समय भी मिलने लगा। ज़्यादा से ज़्यादा बड़े पैमाने पर स्त्रियाँ चूल्हे-चौखट की ग़ुलामी से मुक्त होकर उत्पादन के अतिरिक्त अन्य सामाजिक गतिविधियों में भी हिस्सा लेने लगीं।

दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान पूरे यूरोप को रौंद रही हिटलर की नात्सी सेनाओं को सोवियत संघ की लाल सेना द्वारा धूल चटा देना ख़ुद एक चमत्कार था जो सिर्फ़ इसलिए सम्भव हो सका कि सोवियत जनता न सिर्फ़ हर क़ीमत पर समाजवाद की हिफ़ाज़त करना चाहती थी, बल्कि समाजवाद के घोर शत्रु फ़ासिस्टों को तबाह कर देने के लिए कटिबद्ध थी। पूरी दुनिया को फ़ासीवाद से मुक्ति दिलाने में सोवियत संघ ने अपने दो करोड़ लोगों की क़ुर्बानी देकर वीरता का एक नया महाकाव्य रच डाला।

अक्टूबर क्रान्ति के तोपों के धमाकों के साथ एशिया, अफ़्रीका, लातिन अमेरिका के तमाम उपनिवेशों में साम्राज्यवाद-विरोधी मुक्ति-संघर्ष की एक नयी चेतना पैदा हुई। साथ ही, भारत सहित इन सभी देशों का मज़दूर वर्ग, जिसने अभी सिर्फ़ अपनी आर्थिक माँगों के लिए यूनियन बनाकर लड़ने की शुरुआत की थी, वह तेज़ी से राजनीतिक संघर्ष की राह पर भी आगे बढ़ा और अपनी राजनीतिक पार्टी बनाकर नयी सामाजिक क्रान्ति की तैयारियों में लग गया।

1917 से लेकर 1953 में स्तालिन की मृत्यु तक, जब तक सोवियत संघ में समाजवाद क़ायम था, उसने पूरी दुनिया के हर कोने में जारी जन-मुक्ति संघर्ष को हर तरह का समर्थन-सहयोग दिया और औपनिवेशिक ग़ुलामी के दौर के ख़ात्मे में अहम भूमिका निभायी।

समाजवाद की अस्थायी हार और पूँजीवाद की पुनर्स्थापना का दौर फिर भी बुझी नहीं है अक्टूबर क्रान्ति की मशाल!

स्तालिन की मृत्यु के बाद सोवियत संघ में ख्रुश्चेव के नेतृत्व में एक नये क़िस्म के पूँजीपति वर्ग का शासन क़ायम हो गया। ये पार्टी और राज्य मशीनरी के नौकरशाह थे जो लाल झण्डा, पार्टी और समाजवाद की आड़ लेकर वास्तव में जनता की सम्पत्ति के मालिक बन बैठे थे। यह नये क़िस्म का राजकीय पूँजीवाद था। 1990 आते-आते यह राजकीय पूँजीवाद खुले निजी पूँजीवाद में बदल गया। सभी नकाब और मुलम्मे उतर गये। असलियत सामने आ गयी। सोवियत संघ भी टूट गया।

यह वह दौर था, जब न केवल पूर्वी यूरोप के देशों में खुला पूँजीवाद बहाल हो गया था, बल्कि 1976 में माओ त्से-तुङ की मृत्यु के बाद चीन में भी "बाज़ार समाजवाद" के नाम पर पूँजीवाद बहाल हो चुका था।

दुनियाभर के साम्राज्यवादियों और पूँजीपतियों के भोंपू लगातार चीख़ने लगे कि समाजवाद को हमेशा-हमेशा के लिए नेस्तनाबूद कर दिया गया, कि अक्टूबर क्रान्ति की मशाल हमेशा-हमेशा के लिए बुझा दी गयी। क्या यह सच है?

इतिहास कहता है – नहीं! पहले भी ऐसा कई बार हुआ है कि क्रान्तिकारी वर्ग अपनी अन्तिम जीत के पहले सत्ताधारी वर्गों से कई बार परास्त हुए हैं। पहले भी कई बार क्रान्तियों का पहला चक्र अधूरा या असफल रह गया है और फिर उनके नये चक्र ने इतिहास के नये युग की शुरुआत की है। स्वयं पूँजीवाद सामन्तवाद से तीन सौ वर्षों तक लड़ने और कई-कई बार पराजित होने के बाद ही अन्तिम जीत हासिल कर सका।

सर्वहारा वर्ग और पूँजीपति वर्ग के बीच के विश्व-ऐतिहासिक महासमर का अभी पहला चक्र पूरा हुआ है। नया चक्र अब शुरू हुआ है। पूरी दुनिया में अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करणों का निर्माण अवश्यम्भावी है।

पर इतना ही कहना काफ़ी नहीं। आज विश्वस्तर पर चरम संकटग्रस्त पूँजीवाद मेहनतकशों पर जो कहर बरपा कर रहा है, उससे निजात पाने के लिए अक्टूबर क्रान्ति की मशाल से नयी क्रान्तियों का दावानल भड़काना होगा। और इसके लिए ज़रूरी है कि मेहनतकश अवाम और उसका इन्क़लाबी हरावल दस्ता समाजवाद की फ़िलहाली हार के सभी कारणों को भलीभाँति समझे।

समाजवादी समाज में जारी वर्ग-संघर्ष और पूँजीवाद की फिर से बहाली में पार्टी के भीतर के बुर्जुआ वर्ग की भूमिका

समाजवाद दरअसल पूँजीवाद और वर्ग-विहीन समाज (कम्युनिज़्म) के बीच का एक लम्बा समय होता है जिसमें खेतों-कारख़ानों पर निजी मालिकाने के ख़ात्मे के बावजूद अभी विभिन्न छोटे स्तरों पर निजी स्वामित्व मौजूद रहता है, अन्तर एवं असमानताएँ मौजूद रहती हैं, बाज़ार व मुद्रा मौजूद रहते हैं, शारीरिक श्रम व मानसिक श्रम जैसे भेद मौजूद रहते हैं, तनख़्वाहों में अन्तर बना रहता है, पुरानी आदतें व संस्कार मौजूद रहते हैं, वर्ग-संघर्ष जारी रहता है तथा इस तरह पूँजीवाद के एक या दूसरे रूप में बहाली का ख़तरा भीतर से भी बना रहता है (बाहरी साम्राज्यवादी हमले या तोड़फोड़ का ख़तरा तो लगातार रहता ही है)।

समाजवादी समाज में मौजूद बुर्जुआ वर्गों के हितों की नुमाइन्दगी कम्युनिस्ट पार्टी व राज्य के नेतृत्व में मौजूद वे लोग करते हैं जो अपने ओहदे के विशेषाधिकारों-सुविधाओं के ग़ुलाम बन चुके होते हैं, जो ख़ुद नौकरशाह बन चुके होते हैं, जो वर्ग-संघर्ष को तिलांजलि देकर शान्तिपूर्ण विकास की वकालत करते हैं। ये ख़ुद ही एक क़िस्म के बुर्जुआ वर्ग होते हैं – पार्टी के भीतर के बुर्जुआ वर्ग, जो लाल झण्डा, पार्टी और समाजवाद की आड़ में जनता को ठगकर साम्राज्यवाद और पूँजीवाद की "ऐतिहासिक" सेवा करते हैं। रूस में ख्रुश्चेव-ब्रेझनेव ने और चीन में देङ सियाओ-पिङ और उसके उत्तराधिकारियों ने यही काम किया।

संशोधनवादी और हर तरह के नक़ली कम्युनिस्ट वे भितरघाती हैं जो मज़दूरों की लड़ाई को अन्दर से कमज़ोर करके पूँजीपतियों की सेवा करते हैं!

यही वे नक़ली कम्युनिस्ट हैं, जिन्होंने न केवल समाजवाद को तबाह करके विश्व पूँजीवाद की सेवा की है, बल्कि क्रान्ति होने के पहले भी, यही भितरघाती, मज़दूरों की हर लड़ाई को भीतर से कमज़ोर करते रहे हैं, उनकी पीठ में चाकू भोंकने का काम करते रहे हैं। इन संशोधनवादियों के बारे में लेनिन ने और फिर स्तालिन और माओ ने दुनियाभर के क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग और सच्चे कम्युनिस्टों को बार-बार आगाह किया था। रूस के मेंशेविकों, जर्मनी के कार्ल काउत्स्की और ख्रुश्चेव-ब्रेझनेव, देङ सियाओ-पिङ तथा हमारे देश के डांगे-इन्द्रजीत गुप्त-ज्योति बसु-सुरजीत आदि की नस्ल और बिरादरी एक है।

लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविकों ने यदि मेंशेविकों के अर्थवाद और सुधारवाद के विरुद्ध संघर्ष नहीं किया होता तो क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी का रूस में गठन ही नहीं हुआ होता। कार्ल काउत्स्की और दूसरे इण्टरनेशनल के संशोधनवादियों के विरुद्ध संघर्ष करके लेनिन ने यदि उनका असली चरित्र उजागर नहीं किया होता तो महान अक्टूबर क्रान्ति के लिए रूसी पार्टी और मेहनतकश अवाम की तैयारी ही नहीं हो पाती। यदि माओ ने ख्रुश्चेव के नक़ली कम्युनिज़्म का भण्डाफोड़ नहीं किया होता और चीन के भीतर ल्यू शाओ-ची के गिरोह के विरोध में संघर्ष नहीं किया होता तो महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति का युगान्तरकारी प्रयोग सम्भव ही नहीं हो पाता।

आज भी यह बात पूरी दुनिया और हमारे देश के सन्दर्भ में सही है। समाजवाद को बदनाम करने के लिए पूँजीवादी प्रचार तन्त्र ख्रुश्चेव-ब्रेझनेव और देङ आदि संशोधनवादियों के सभी कुकर्मों की तोहमत समाजवाद के मत्थे मढ़ रहा है। हमारे देश में भी इन्द्रजीत गुप्त से लेकर ज्योति बसु तक – इन सबके पाप का घड़ा कम्युनिज़्म के मत्थे फोड़कर कम्युनिज़्म के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को बदनाम किया जाता है। यूरोप से लेकर भारत तक – ये सभी किसिम-किसिम के नक़ली कम्युनिस्ट बुर्जुआ संसदों के सुअरबाड़ों में बरसों से लोट लगा रहे हैं और अब तो प्रायः सरकारों में शामिल होकर उदारीकरण और निजीकरण की नीतियों को लागू करने में अहम भूमिका निभा रहे हैं। पहले तो यह पूँजीवादी व्यवस्था की दूसरी सुरक्षापंक्ति के रूप में छिपकर काम करते थे और कम्बल ओढ़कर घी पीते थे। अब यह सब कुछ खुलेआम हो रहा है। इसका लाभ यह है कि मेहनतकश जनता, जो मार्क्सवाद के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों से अपरिचित है, वह भी इनकी करनी से इनका असली चरित्र पहचानने लगी है। शेर की खाल ओढ़कर 'ढेंचू-ढेंचू' करने वाले पहचाने जाने लगे हैं।

नक़ली वामपन्थियों का भण्डाफोड़ लगातार करो! ट्रेडयूनियनों से अर्थवाद-सुधारवाद और नौकरशाही को उखाड़ फेंको!!

फिर भी सर्वहारा क्रान्तिकारियों को निश्चिन्त होने की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि

क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बिखरे होने और कमज़ोर होने के कारण, बहुतेरे मेहनतकश ज्योति बसु-इन्द्रजीत गुप्त की पार्टियों और एटक-सीटू आदि के नेताओं को ही कम्युनिस्ट समझते हैं। व्यापक मज़दूर आबादी को कम्युनिज़्म के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों से और संशोधनवाद-अर्थवाद की असलियत से परिचित कराने के लिए क्रान्तिकारी प्रचार की कार्रवाई ज़रूरी है।

मज़दूर यूनियनों में अभी भी इन्हीं अर्थवादी ट्रेडयूनियन नेताओं की नौकरशाही हावी है, जिन्होंने मज़दूर वर्ग को सिर्फ़ आर्थिक माँगों की लड़ाई तक ही सीमित रखकर उसे उसके राजनीतिक संघर्ष के कार्यभार और पूँजी के विरुद्ध निर्णायक संघर्ष के ऐतिहासिक मिशन से एकदम अपरिचित रखा है। इनके असली चरित्र को जानने के बाद मज़दूर वर्ग निराश होकर या तो बुर्जुआ ट्रेडयूनियनों की ओर जा रहा है या फिर अराजकतावादी ढंग के आन्दोलन-उभार का रास्ता अपना रहा है। इसके बजाय मज़दूर वर्ग क्रान्तिकारी आधार पर ट्रेडयूनियन आन्दोलन के पुनर्निर्माण का रास्ता अपनाये, व्यापक मज़दूर एकता के नारे को अमली जामा पहनाये और जनवादी तौर-तरीक़ों के द्वारा ट्रेडयूनियन नौकरशाही की जड़ ही खोद डाले – इसके लिए मज़दूर आबादी के बीच व्यापक क्रान्तिकारी प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलानी होगी। और यह काम उनके बीच जाकर उनके रोज़मर्रा के आर्थिक और राजनीतिक माँगों के संघर्षों में सक्रिय भागीदारी के साथ-साथ करना होगा।

ट्रेडयूनियन आन्दोलन का क्रान्तिकारीकरण भी वही मज़दूर वर्ग कर सकता है जो राजनीतिक संघर्ष के अपने कार्यभार को भी समझे और अपने वर्ग-संगठन के सबसे उन्नत रूप के तौर पर एक क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी के निर्माण की ज़रूरत को महसूस करे। कहा जा सकता है कि ट्रेडयूनियन आन्दोलन के क्रान्तिकारीकरण के कार्यभार और एक सर्वभारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण एवं गठन से सम्बन्धित कार्यभार एकदम अलग-अलग न होकर एक-दूसरे से अनेक रूपों में जुड़े हुए हैं।

दुर्भाग्य से वामपन्थी दुस्साहसवादी भटकावों और भारतीय परिस्थितियों की ग़लत समझ के कारण भारत के क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों ने औद्योगिक सर्वहारा वर्ग के बीच और ट्रेडयूनियन के मोर्चे पर कामों की या तो उपेक्षा की या फिर सही ढंग से काम ही नहीं किया। "वामपन्थी" भटकावों से उबरे क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट संगठनों ने यदि इस मोर्चे पर काम भी शुरू किया तो वस्तुतः अर्थवादी-जुझारू अर्थवादी तौर-तरीक़े ही अपनाते रहे। स्थिति कुछ ऐसी रही कि पार्टी बनाने से सम्बन्धित राजनीतिक कामों के लिए वामपन्थी बुद्धिजीवियों पर भरोसा किया जाता रहा और मज़दूरों को महज़ आर्थिक संघर्षों के लिए ही छोड़ दिया जाता रहा।

आज हालात ऐसे हैं कि मज़दूर यदि नीतियाँ बनाने वाली पूँजीवादी राज्य मशीनरी के ख़िलाफ़ राजनीतिक लड़ाई नहीं लड़ेगा, तो अलग-अलग बँटकर लड़ता हुआ अपनी छोटी-छोटी आर्थिक माँगें भी नहीं मनवा पायेगा!

यह एक अच्छी बात है कि आज भारतीय शासक वर्ग की आर्थिक नीतियों ने ख़ुद ही ऐसी अनुकूल स्थिति पैदा कर दी है कि मज़दूर वर्ग राजनीतिक अधिकारों के संघर्ष के लिए प्रचार को स्वीकार करने के लिए पहले हमेशा से अधिक तैयार होता जा रहा है। निजीकरण और उदारीकरण की नीतियाँ संकटग्रस्त विश्व पूँजीवाद की नीतियाँ हैं जो भारत में भी मेहनतकश जनता के सामने छँटनी-तालाबन्दी, बेरोज़गारी और महँगाई का अभूतपूर्व कहर बरपाना शुरू कर चुकी हैं। मेहनतकश अवाम समझता जा रहा है कि अब सिर्फ़ वेतन-वृद्धि और चन्द सुविधाओं के लिए लड़ने पर वह भी नहीं मिलने वाला। अब वेतन-वृद्धि की आंशिक लड़ाई भी तभी जीती जा सकती है जब पूरी आर्थिक नीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठायी जाये, रोज़गार के बुनियादी अधिकार को मुद्दा बनाया जाये और जनविरोधी नीतियों को बनाने और लागू करने वाली राज्य मशीनरी के ख़िलाफ़ संगठित हुआ जाये। हालात ऐसे बन रहे हैं कि मज़दूर वर्ग ट्रेडयूनियन के धन्धेबाज़ों की गिरफ़्त से बाहर आकर इस सच्चाई को आसानी से समझ और पकड़ सकता है।

आगे बढ़ने की पहली शर्त – जयचन्दों और मीरज़ाफ़रों से छुटकारा पाना होगा!

इतिहास में यह सच्चाई एक बार फिर और उन्नत धरातल पर दुहराई जायेगी कि सर्वहारा वर्ग युद्ध में विजय की पहली गारण्टी के तौर पर अपने भितरघातियों से – जयचन्दों और मीरज़ाफ़रों से – भाँति-भाँति के अर्थवादी, उदारवादी, सुधारवादी नक़ली कम्युनिस्टों और मज़दूर नेताओं से अपना पीछा छुड़ायेगा। अक्टूबर क्रान्ति के पूर्व भी ऐसा ही हुआ था। अब अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण के जन्म के पूर्व भी ऐसा ही होगा।

अक्टूबर क्रान्ति की मशाल बुझा देने के तमाम साम्राज्यवादी दावे अभी झूठे साबित हो रहे हैं। रूस, उक्रेन व पूर्व सोवियत संघ के अन्य घटक देशों में जनता लाखों की तादाद में लेनिन और स्तालिन के पोस्टर हाथों में लिये येल्त्सिन के साथ ही जुगानोव जैसे फ़र्ज़ी कम्युनिस्टों के ख़िलाफ़ भी नारे लगा रही है और दर्जनों क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट संगठन फ़िलहाल वहाँ सक्रिय हैं। लातिन अमेरिका और एशिया के तमाम देशों में आर्थिक नवउपनिवेशवाद की तबाही के ख़िलाफ़ लगातार जनविद्रोहों की ख़बरें आ रही हैं। इन देशों में भी क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट जनता के बीच लगातार काम कर रहे हैं। यूरोप से लेकर जापान, कोरिया आदि देशों तक नये सिरे से उठ खड़े हुए जुझारू मज़दूर आन्दोलन "दैत्य के दुर्ग के भीतर तूफ़ान" का संकेत दे रहे हैं।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि सर्वहारा वर्ग विश्व पूँजीवाद के दुर्गों पर फ़ैसलाकुन चोट करने के लिए जाग रहा है।

हम आह्वान करते हैं...

अक्टूबर क्रान्ति की 80वीं सालगिरह के मौक़े पर हम भारतीय मज़दूर वर्ग का भी आह्वान करते हैं कि जागो! एकताबद्ध हो जाओ!! आगे बढ़ो!!!

हम आह्वान करते हैं कि नक़ली वाम को पहचानो, असली वाम का झण्डा ऊपर उठाओ!

हम आह्वान करते हैं कि ट्रेडयूनियन आन्दोलन से नौकरशाही और अर्थवाद-सुधारवाद को उखाड़ फेंको! अलग-अलग ट्रेडयूनियनों की दलगत दुकानदारियों में मज़दूरों को बाँटे जाने की साज़िश को पहचानो और व्यापक मज़दूर एकता और जनवाद के आधार पर संगठित हो जाओ!

हम आह्वान करते हैं कि सिर्फ़ आर्थिक लड़ाई लड़ने के बजाय अपने राजनीतिक अधिकारों के लिए लड़ो, मज़दूर विरोधी आर्थिक नीतियाँ बनाने वाली राज्यसत्ता के ख़िलाफ़ राजनीतिक लड़ाई लड़ो!

हम आह्वान करते हैं कि क्रान्तिकारी विचारधारा के मार्गदर्शक सिद्धान्त और क्रान्तिकारी पार्टी की राजनीतिक ज़रूरत को पहचानो! देशस्तर पर सर्वहारा वर्ग की एक क्रान्तिकारी पार्टी फिर से खड़ी करने के लिए आगे आओ।

हम आह्वान करते हैं – महान अक्टूबर क्रान्ति की मशाल को ऊँचा उठाओ।

('बिगुल', नवम्बर 1997 में प्रकाशित)

अक्टूबर की हवाएँ मरी नहीं हैं!
वे फिर उठेंगी भयंकर तूफ़ान बनकर!

आज से 82 वर्षों पहले, **लेनिन** और **बोल्शेविक पार्टी** के नेतृत्व में रूस में पेत्रोग्राद के मज़दूरों ने शीतप्रासाद पर धावा बोलकर अस्थायी सरकार की सत्ता को धूल में मिला दिया था और पहली सफल सर्वहारा क्रान्ति को अंजाम दिया था। **अक्टूबर क्रान्ति** पहले विश्वयुद्ध के बीच सम्पन्न हुई थी जब प्रतिस्पर्धी साम्राज्यवादी डकैत गिरोहों के आपसी युद्ध में लाखों लोग अपने प्राण गँवा रहे थे।

यूरोप के अधिकांश देशों के मज़दूरों के तथाकथित समाजवादी नेता अन्धराष्ट्रवादी बयार में बहकर इस जघन्यतम अपराध के साझीदार बन चुके थे और यूरोपीय मज़दूर वर्ग का आह्वान कर रहे थे कि वे "मातृभूमि की रक्षा" के नाम पर अपने ही शोषकों के हितों के लिए अपनी बलि दें। बोल्शेविक दूसरे इण्टरनेशनल के इन ग़द्दारों के विरुद्ध, एकदम अलग-थलग पड़ जाने का ख़तरा मोल लेकर भी, डटकर खड़े हुए। अपने देश में भी भाँति-भाँति की सुधारवादी, अर्थवादी धाराओं से समझौताहीन संघर्ष करके उन्होंने मज़बूत विचारधारात्मक आधार पर सुसंगठित क्रान्तिकारी ढाँचे वाली पार्टी खड़ी की और सर्वहारा वर्ग तथा व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय को नेतृत्व देते हुए तत्कालीन रूस की विशिष्ट क्रान्तिकारी परिस्थितियों से गुज़रते हुए पुरानी व्यवस्था को चकनाचूर कर देने के लिए तैयार किया।

यूँ कहने के लिए 1917 की सोवियत समाजवादी क्रान्ति को अक्टूबर क्रान्ति कहा जाता है, लेकिन सच यह है कि शीतप्रासाद पर धावा और अस्थायी सरकार को सत्ताच्युत करने की ऐतिहासिक शौर्यपूर्ण कार्रवाई का दिन (पुराने कैलेण्डर से 25 अक्टूबर, नये कैलेण्डर से 7 नवम्बर) क्रान्ति के सर्वोपरि राजनीतिक कार्यभार—राजनीतिक सत्ता पर क़ब्ज़ा करने के कार्यभार के समापन का नहीं बल्कि समारम्भ का दिन था। सभी प्रतिक्रियावादी ताक़तों ने एकजुट होकर नवजात क्रान्तिकारी सर्वहारा सत्ता पर हमला बोल दिया। दुनियाभर के सभी साम्राज्यवादी न सिर्फ़ उनकी पीठ पर खड़े रहे, बल्कि सीधे हमले की कार्रवाई से भी बाज़ नहीं आये। गृहयुद्ध के कठिन वर्षों से गुज़रने के बाद ही सर्वहारा वर्ग राजनीतिक सत्ता देशव्यापी स्तर पर, प्रभावी ढंग से हासिल कर सका। कहा जा सकता है कि अक्टूबर क्रान्ति पूरे विश्व पूँजीवादी तन्त्र के ख़िलाफ़

अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग द्वारा युद्ध की घोषणा थी। इसलिए लाज़िमी तौर पर इसे न सिर्फ़ रूस बल्कि पूरी दुनिया के साम्राज्यवादियों के प्रचण्डतम क्रोध का शिकार होना ही था।

बोल्शेविकों को यह पूरी उम्मीद थी कि यूरोप के मज़दूर रूसी सर्वहारा के रास्ते पर चल पड़ेंगे क्योंकि महायुद्ध के विनाशकारी नतीजों को वे भी भीषण रूप से भुगत रहे थे। बेशक, अक्टूबर क्रान्ति के बाद पूरे यूरोप में क्रान्तिकारी संघर्षों की एक बड़ी लहर आयी, जिसका शिखर-बिन्दु विफल जर्मन क्रान्ति थी, लेकिन मुख्यतः अवसरवादी-संशोधनवादी जकड़बन्दी के चलते और दूसरे, चौकन्ना हो चुके साम्राज्यवादियों की एकजुट कोशिशों के चलते यूरोपीय क्रान्तियों की कोशिशें पीछे धकेल दी गयीं। यह यूरोप में क्रान्तिकारी सम्भावनाओं का अन्तिम विस्फोट था जो दरअसल पिछली सदी की मुख्य प्रवृत्ति की यात्रा का ही आख़िरी सिरा था। उन्नीसवीं सदी का यूरोप स्वतन्त्र प्रतियोगिता वाले पूँजीवाद का रंगमंच था और सर्वहारा क्रान्तियों के तूफ़ान का केन्द्र था। सदी के अन्त में जब इज़ारेदारियों और विश्व बाज़ार का विकास हुआ और पूँजीवाद ने साम्राज्यवाद के युग में प्रवेश किया तो उपनिवेशों-अर्द्धउपनिवेशों की भारी लूट से यूरोपीय लुटेरों ने अपने देशों के संगठित सर्वहाराओं के एक बड़े हिस्से को रियायतों और सुविधाओं की घूस दी और इन सुविधाप्राप्त सफ़ेदपोश मज़दूरों में अवसरवाद-अर्थवाद की राजनीति का आधार विस्तारित हुआ। क्रान्तियों के तूफ़ानों का केन्द्र पश्चिम से खिसककर पूरब में आने लगा और उपनिवेशों की साम्राज्यवाद-सामन्तवाद विरोधी राष्ट्रीय जनवादी क्रान्तियाँ विश्व सर्वहारा क्रान्ति का अंग बन गयीं।

1917 का रूस न विकसित पश्चिम का अंग था, न ही पिछड़े पूरब का। वह पूरब-पश्चिम के बीच का सेतु था और क्रान्तियों के तूफ़ानों का केन्द्र जब पश्चिम से पूरब की ओर आ रहा था तो रूसी सर्वहारा वर्ग ने ऐतिहासिक भूमिका निभाते हुए पहली महान, सफल सर्वहारा क्रान्ति को "पूरब-पश्चिम सेतु" पर ही अंजाम दे दिया। पर यूरोप की आग भी संशोधनवादी शीतलहरी के बावजूद अभी पूरी तरह बुझी नहीं थी। अक्टूबर क्रान्ति के बाद वह आख़िरी बार अपनी पूरी ताक़त लगाकर भड़क उठी थी और फिर कुचल दी गयी थी।

●

सोवियत समाजवादी क्रान्ति सर्वहारा क्रान्तियों के युग के पदार्पण की घोषणा थी। यह सभी देशों के मज़दूरों के लिए और मुट्ठीभर साम्राज्यवादियों की लूट और दमन की शिकार एशिया, अफ़्रीका और लातिन अमेरिका की उत्पीड़ित जनता के लिए युद्धनाद था। युवा समाजवादी राज्य के समर्थन में पूरी दुनिया के मज़दूर आगे आये। अक्टूबर क्रान्ति के तोपों के धमाकों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को धरती के कोने-कोने तक पहुँचा दिया। दर्जनों देशों में सर्वहारा क्रान्तिकारी पार्टियाँ संगठित हो गयीं। अक्टूबर क्रान्ति

के बाद गठित **कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल** ने नयी पार्टियों का मार्गदर्शन करने और सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयतावाद का झण्डा ऊँचा उठाने में अहम भूमिका निभायी।

अक्टूबर क्रान्ति ने डंके की चोट पर घोषणा करके सर्वहारा अधिनायकत्व की घोषणा की। अब तक की सभी राज्यसत्ताएँ किसी न किसी शोषक-शासक वर्ग का अधिनायकत्व ही थीं, पर वे अपने वर्ग-चरित्र पर तरह-तरह के पर्दे डाले रहती थीं। सर्वहारा समाजवादी सत्ता ने यह स्वीकार किया कि वह पूँजीपतियों-भूस्वामियों पर सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में बहुसंख्यक मेहनतकश अवाम का अधिनायकत्व स्थापित करेगी। जो राज्यसत्ता जनता के बहुसंख्यक हिस्से के हितों का वास्तव में प्रतिनिधित्व करती है, उसे अपनी मंशा और अपना रंग छुपाने की कोई ज़रूरत नहीं होती।

प्रारम्भ से ही साम्राज्यवादियों ने और सभी प्रतिक्रियावादियों ने समाजवादी राज्य के प्रति अपनी चरम घृणा और अदम्य भय का लगातार प्रदर्शन किया। बल्कि वे उसे छुपाने में असफल रहे। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व वाले सोवियत संघ को अलग-थलग कर देने, उसका गला घोंट देने, साज़िशें करने, तोड़फोड़ करने तथा विभीषणों और शिखण्डियों की मदद से वार करने का कोई भी मौक़ा साम्राज्यवादी कभी नहीं चूके। लेकिन सोवियत सर्वहारा अपने वर्ग-अधिनायकत्व की हिफ़ाज़त में सफल रहा। वर्ग-समाजों के हज़ारों वर्षों के इतिहास में पहली बार उत्पादन के साधनों—कारख़ानों, खेतों आदि को पूरे समाज की मिल्कियत बना दिया गया। नये समाजवादी उद्योग और कृषि ने विकास के नये कीर्तिमान स्थापित करते हुए अतीत की औद्योगिक क्रान्तियों को पीछे छोड़ दिया। विज्ञान और तकनोलॉजी के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व तरक़्क़ी हुई। बेरोज़गारी, निरक्षरता, वेश्यावृत्ति, नारी-उत्पीड़न, कुपोषण-जनित बीमारियों और सामाजिक अपराधों का नामोनिशान मिट गया, सामाजिक विषमता की गहरी खाइयाँ पाट दी गयीं, परजीविता की अमरबेल सूख गयी और पूरा सोवियत समाज ज़्यादा से ज़्यादा उन्नत समता-मूलकता की दिशा में लगातार लम्बे डग भरता रहा। यह जागृत मेहनतकश जनता की एकजुट शक्ति और फ़ौलादी संकल्पों का ही नतीजा था कि दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान जर्मन नात्सी साम्राज्यवादियों की पूरी सामरिक शक्ति के सामने सोवियत संघ टिका रहा और फिर उसे धूल में मिलाने के काम को भी उसी ने अंजाम दिया।

●

पेत्रोग्राद के मज़दूर जब शीतप्रासाद की ओर बढ़ रहे थे तब शायद उन्हें यह अहसास नहीं रहा होगा कि वे मानवता के इतिहास के एक नये अध्याय का पन्ना पलटने जा रहे हैं। उनकी बन्दूक़ों ने रूसी क्रान्ति के साथ ही दूसरे देशों में भी क्रान्तियों की राह को रौशन किया। रूसी क्रान्ति की गौरवशाली विरासत को आगे विस्तार देते हुए चीन में माओ ने इस सदी की दूसरी महानतम क्रान्ति को अंजाम दिया। चीन की नवजनवादी क्रान्ति ने साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाह-दलाल पूँजीवाद के विरुद्ध

दीर्घकालिक लोकयुद्ध के रास्ते से विजय प्राप्त की।

अक्टूबर क्रान्ति का ऐतिहासिक महत्त्व और उसका ऐतिहासिक संवेग आज की दुनिया में भी बरक़रार है। सर्वहारा क्रान्तियों की विश्वव्यापी पराजय का यह अर्थ व़+तई नहीं हो सकता कि सर्वहारा क्रान्तियों का युग बीत गया। अपने स्वरूप व कार्यप्रणाली में तमाम बदलावों के बावजूद दुनिया जब तक साम्राज्यवाद के युग में जी रही है, तब तक सर्वहारा क्रान्ति के युग में ही जी रही है।

आने वाली सदी की नयी सर्वहारा क्रान्तियों के नये चक्र के लिए अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाओं का महत्त्व बना रहेगा। अक्टूबर क्रान्ति का रास्ता हथियारों के बल पर सर्वहारा वर्ग द्वारा राजनीतिक सत्ता हासिल करने का रास्ता था। उसके बाद की सर्वहारा क्रान्तियों का भी यही रास्ता था और आने वाले दिनों की सर्वहारा क्रान्तियों का रास्ता भी यही होगा।

आज सोवियत संघ का अस्तित्व नहीं रह गया है। 1953 में स्तालिन की मृत्यु के बाद वहाँ ख्रुश्चेवी नक़ली समाजवाद के झण्डे तले पूँजीवाद की फिर से बहाली हो गयी। गोर्बाचोव-येल्त्सिन काल में उस नक़ली लाल झण्डे को भी फेंक दिया गया और पूँजीवादी तानाशाही नग्न रूप में क़ायम हो गयी। माओ त्से-तुङ ने चीन में सांस्कृतिक क्रान्ति के प्रयोग द्वारा पूँजीवादी पुनर्स्थापना के ख़तरों से लड़ते हुए और उनका क्रमशः ख़ात्मा करते हुए समाजवाद को आगे ले जाने के रास्ते की खोज तो की, लेकिन उनकी मृत्यु के बाद वहाँ भी चीनी नक़ली कम्युनिस्टों के नेतृत्व में नयी पूँजीवादी सत्ता बहाल हो गयी।

आज पीछे मुड़कर जब इतिहास के गुज़रे दशकों पर हम नज़र डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि बीसवीं सदी के पूँजीवाद के तमाम अन्दरूनी संकट और ठहराव के बावजूद विश्वस्तर पर वर्ग शक्ति-सन्तुलन अभी सर्वहारा क्रान्तियों के निरन्तर आगे बढ़ते जाने के अनुकूल नहीं था। वैसे इतिहास इस तरह आगे बढ़ता भी नहीं। वह आगे-पीछे होता हुआ आगे बढ़ता है। वैसे यह मूल्यांकन उस समय किया भी नहीं जा सकता था जब जनक्रान्तियों के ज्वार के दबाव में साम्राज्यवाद लगातार पीछे हट रहा था। यह मूल्यांकन, आज की प्रतिकूल स्थितियों में सिंहावलोकन करते हुए ही किया जा सकता है। और यह भी आज का ही वस्तुपरक मूल्यांकन है कि विश्व पूँजीवाद का स्वरूप आज जितना अनुत्पादक और परजीवी है तथा आज इसके संकटों-समस्याओं की असाध्यता की जो प्रकृति है, वैसी पहले कभी नहीं थी। वह अपने संकटों से बेहाल, पूरी दुनिया में और ख़ासकर तीसरी दुनिया में मेहनतकश आबादी पर जो क़हर बरपा कर रहा है, उसका सिलसिला अन्तहीन हो ही नहीं सकता। यही अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण की वस्तुगत ज़मीन है।

सर्वहारा क्रान्ति की जो बिखरी हुई चेतनशील नेतृत्वकारी शक्तियाँ हैं, वे अक्टूबर क्रान्ति और चीनी सांस्कृतिक क्रान्ति की शिक्षाओं को आत्मसात करके मार्क्सवाद के

आलोक में आज की स्थितियों का अध्ययन करके, प्रयोगों के एक सिलसिले के बाद जब नयी क्रान्तियों के स्वरूप और रास्ते की समझदारी विकसित कर लेंगी, तो उनकी एकजुटता की प्रक्रिया तेज़ी से आगे बढ़ेगी। साम्राज्यवाद के नये दौर का नक्शा साफ़ हो रहा है। संक्रमणकाल बीत रहा है। दुनिया के अलग-अलग कोनों से उभड़ते-फूटते वर्ग-संघर्ष के मुखर रूप आने वाले तूफ़ान का संकेत दे रहे हैं। अक्टूबर क्रान्ति की हवाएँ पूरी तरह से मरी तो कभी नहीं थीं; और सर्वहारा क्रान्ति के विज्ञान की समझ से इतिहास को खँगालने और वर्तमान की कोख में छिपे भविष्य के बीजों को निरखने-परखने के बाद, पूरे भरोसे के साथ कहा जा सकता है कि आने वाले दिनों में वे फिर प्रचण्ड चक्रवाती तूफ़ान बनकर उठेंगी। इक्कीसवीं सदी भूकम्पकारी उथल-पुथल की सदी होगी, यह हमारा गहरा विश्वास है।

('बिगुल', नवम्बर 1999 में प्रकाशित)

अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाएँ और हमारा समय, हमारा देश

यह सदी जैसे-जैसे ढल रही है, लाइलाज बीमारियों से जकड़े विश्व-पूँजीवाद की कराहें बढ़ती जा रही हैं। 1989-90 में समाजवाद की "मौत" पर (हालाँकि वह समाजवाद की नहीं, समाजवादी मुखौटे वाली एक दोगले पूँजीवाद की यानी सामाजिक जनवाद की या संशोधनवाद की मौत थी) ख़ुशियों की जो किलकारियाँ फूटी थीं, वे बहुत जल्दी ही गले की घुरघुराहट बनकर रह गयी हैं और कम्युनिज़्म का हौआ एक बार फिर पूँजीवाद को सताने लगा है। इस तगड़े प्रेत की झाड़-फूँक करते पूँजीवादी अर्थशास्त्री-विचारक ओझा-गुनियों के तमाम तन्त्र-मन्त्र बेकार सिद्ध हो रहे हैं।

ऐसे में यह बेहद स्वाभाविक है कि सोवियत समाजवादी क्रान्ति की 81वीं सालगिरह के मौक़े पर मेहनतकश अवाम को उस पहली सफल सर्वहारा क्रान्ति की न सिर्फ़ याद दिलायी जाये, न सिर्फ़ उसके इतिहास के और उसके मार्गदर्शक सिद्धान्त के अध्ययन के लिए प्रेरित किया जाये बल्कि इस मसले पर भी सोचने के लिए उसे तैयार करना बेहद ज़रूरी है कि साम्राज्यवाद के मौजूदा नये दौर की मज़दूर क्रान्तियों का स्वरूप कैसा होगा, रास्ता क्या होगा! उसे यह विश्वास दिलाना होगा कि अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण ज़रूर तैयार होंगे। पूँजीवाद मानव इतिहास का आख़िरी मुक़ाम नहीं है।

आज जब हम मज़दूर क्रान्ति की बात करते हैं तो यह न तो कोरी अटकलबाज़ी है और न ही कोई किताबी बात। **मार्क्स-एंगेल्स** ने सर्वहारा क्रान्ति के जिस विज्ञान का विकास किया – वह हज़ारों वर्षों के वर्ग-संघर्षों और अपने समय के पूँजीवाद का अध्ययन करके किया। उनके जीवन-काल में ही 1871 के **पेरिस कम्यून** ने न सिर्फ़ उनकी सोच को सही साबित किया बल्कि आगे भी बढ़ाया। **लेनिन** ने बीसवीं सदी के नये पूँजीवाद को – दुनियाभर के बाज़ारों पर इज़ारेदारी क़ायम करने वाले पूँजीवाद को, समझा और बताया कि साम्राज्यवाद का यह दौर पूँजीवाद की चरम अवस्था है और सर्वहारा क्रान्तियों की पूर्वबेला है।

1917 की रूसी समाजवादी क्रान्ति ने लेनिन के सिद्धान्तों को सही साबित किया। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में दुनिया में पहली बार अपनी ज़ंजीरों को तोड़कर मेहनतकशों ने "स्वर्ग पर धावा" बोला, राज्यसत्ता पर क़ब्ज़ा हासिल किया, सभी लुटेरे

वर्गों पर सर्वहारा वर्ग की अगुवाई में कमेरे वर्गों की हुकूमत बहाल की और साम्राज्यवादी देशों के हमलों, तोड़-फोड़ की कार्रवाइयों तथा देशी प्रतिक्रियावादियों एवं भितरघातियों की साज़िशों से निपटते हुए समाजवाद का निर्माण शुरू किया। दुनिया में पहली बार मज़दूर राज्य के मालिकाने के रूप में कारख़ानों पर मेहनतकश जनता का सामूहिक मालिकाना क़ायम हुआ और खेतों पर भी सामूहिक स्वामित्व क़ायम करके तथा निजी मालिकाने को ख़त्म करके शोषण और सामाजिक अन्तर के सबसे बुनियादी आधार को समाप्त कर दिया गया। उत्पादन के साधनों पर उत्पादक वर्गों का सामूहिक स्वामित्व क़ायम होने के बाद रूस में **स्तालिन** के नेतृत्व में जो तरक़्क़ी हुई, वह जगज़ाहिर रही है। न सिर्फ़ सभी की बुनियादी ज़रूरतें पूरी होने लगीं, बल्कि समान रूप से पूरी होने लगीं। शिक्षा-स्वास्थ्य की सुविधाएँ मुफ़्त थीं। आवास सभी के पास थे। बेरोज़गारी थी ही नहीं। तमाम रोगों, अपराधों, वेश्यावृत्ति आदि का ख़ात्मा हो गया। एक समय का पिछड़ा, बर्बर रूस वैज्ञानिक तरक़्क़ी में अमेरिका और यूरोप के देशों के क़रीब आकर खड़ा हो गया।

यही वह मज़दूर राज्य था जिसने साम्राज्यवाद के फ़ासिस्ट भस्मासुर हिटलर को शिकस्त देकर पूरी मानवता को उससे निजात दिलायी।

बेशक स्तालिन की मौत के बाद दुनियाभर के पूँजीपतियों और देश के भीतर पूँजीवादी तत्त्वों की साज़िश सफल हुई और ख्रुश्चेव की रहनुमाई में मज़दूरों को धोखा देने के लिए लाल झण्डा उड़ाते हुए समाजवादी खोल में पूँजीवाद बहाल कर दिया। पर उधर चीन में अक्टूबर क्रान्ति का झण्डा उठाकर **माओ** ने ग़द्दार ख्रुश्चेव के ख़िलाफ़ वैसी ही उसूली लड़ाई चलायी जैसी लेनिन ने ग़द्दार काउत्स्की के ख़िलाफ़ चलायी थी। उन्होंने **सांस्कृतिक क्रान्ति** के ज़रिये समाजवाद को आगे बढ़ाने और पूँजीवाद के ख़तरे को रोकने का सिद्धान्त विकसित किया।

आज सोवियत संघ बिखर चुका है। 1990 में समाजवादी खोल को फाड़कर पूँजीवाद का बौना राक्षस बाहर आ गया और रूस में उसका नंगा नाच आज भी जारी है। चीन में भी माओ की मृत्यु के बाद बहाव उलट गया, लेकिन वहाँ अभी पूँजीवादी राक्षस समाजवादी खोल के भीतर है। कब वह इससे बाहर आता है, देखने की बात है।

पर समाजवादी धारा की आज जो विश्वव्यापी हार की स्थिति है, उससे यह व्+तई नहीं साबित होता कि अक्टूबर क्रान्ति की मशाल सदा-सर्वदा के लिए बुझ गयी। इतिहास में क्रान्तियों की यह गति रही है कि वे लहरों में आगे बढ़ती हैं – आगे-पीछे, ऊपर-नीचे होती हुई। एक वर्ग जब दूसरे वर्ग के ख़िलाफ़ क्रान्ति की लड़ाई शुरू करता है तो जमे-जमाये सत्ताधारियों से वह शुरू में हारता भी है, सत्ता हासिल करके फिर गँवा भी देता है, फिर अन्ततः जीत उसकी होती है क्योंकि वह इतिहास को आगे ले जा रहा होता है। सामन्तों के ख़िलाफ़ पूँजीवादी क्रान्तियाँ भी कई हारों के बाद जाकर मुकम्मिल तौर पर जीत सकीं।

सर्वहारा क्रान्तियों के साथ भी आज ऐसा ही हो रहा है। और फिर सोचने की बात यह है कि समाजवादी क्रान्तियों का मक़सद सिर्फ़ पूँजीवाद ही नहीं, चार हज़ार वर्षों पुरानी निजी स्वामित्व पर आधारित शोषण-असमानता के पूरे सामाजिक ढाँचे को तोड़कर कम्युनिज़्म की दिशा में आगे बढ़ना है। फिर यदि सर्वहारा क्रान्ति कुछ देशों में कुछ महान डग भरने के बाद पराजित कर दी गयी तो यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है।

अहम बात यह है कि मानव इतिहास चाहे कुछ दशकों तक ही सही, समाजवाद का साक्षी हो चुका है और उसकी जादुई उपलब्धियों को देख चुका है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मज़दूर वर्ग-सत्ता पर क़ाबिज़ होकर शासन चला सकता है, उत्पादन के साधनों – कारख़ानों, खेतों आदि को पूरे समाज की मिल्कियत बना सकता है, और यह व्यवस्था चल सकती है – यह साबित हो चुका है। क्रान्तियों की वक़्ती हार उनकी मौत नहीं होती, विचारधारा की हार नहीं होती। इतिहास के प्रयोग अकारथ नहीं जाते। उनके अनुभव आगे की क्रान्तियों की विरासत बनते हैं।

इन्हीं अर्थों में महान अक्टूबर क्रान्ति पूरी दुनिया के मज़दूरों की विरासत है। जिसे सँभालना होगा, जिसे समझना होगा और फिर आगे बढ़ाना होगा। पूँजीवाद को अन्तिम तौर पर क़ब्र में दफ़नाने वाली आगे की समाजवादी क्रान्तियों के सामने अक्टूबर क्रान्ति एक शुरुआती प्रयोग ही कहलायेगी। पर शुरुआती प्रयोगों का ऐतिहासिक महत्त्व अमर होता है। वे बुनियाद होते हैं। उन्हीं के ज़रिये क्रान्ति के सिद्धान्त पहले साबित और फिर विकसित किये जाते हैं और फिर भावी क्रान्तियों के मार्गदर्शक बनते हैं। इस मायने में अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाओं का आज के मेहनतकशों और उनके हरावल दस्तों के लिए ऐतिहासिक महत्त्व है।

अक्टूबर क्रान्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण सबक़ तो यही है कि पूँजीवाद विरोधी मज़दूर क्रान्तियाँ हर-हमेशा सचेतन क्रान्तियाँ होंगी। महज़ बग़ावत क्रान्ति नहीं हो सकती। एक व्यवस्था को मौत वही दे सकता है जिसे इसका तरीक़ा पता हो और जिसके पास एक नयी व्यवस्था का मुकम्मल नक्शा हो। यानी क्रान्ति के विज्ञान की ठोस समझ पर आधारित मज़दूर वर्ग की एक सही-सच्ची पार्टी के अभाव में क्रान्ति नामुमकिन है। एक ऐसी क्रान्तिकारी पार्टी जो सर्वहारा वर्ग की पार्टी हो, मध्यमवर्गीय भटकावों से मुक्त हो तथा जो मार्क्सवादी विज्ञान के आधार पर देश-विदेश में क्रान्ति के स्वरूप और रास्ते की समझ रखती हो।

भारत में (और दुनिया के अन्य देशों में भी) नये दौर की नयी सर्वहारा क्रान्तियों के लिए नये सिरे से एक क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी खड़ी करनी होगी। सी.पी.आई, सी.पी.एम. जैसी पार्टियाँ परुआ बैल की तरह जुआठा कन्धे से पटक चुकी हैं। ये पूँजीवादी पार्टियों के साथ "चोर-सिपाही" का खेल खेल रही हैं। फ़र्क़ सिर्फ़ यह है कि "चुनाव-चुनाव" के इस खेल में इस टीम की जर्सी लाल है। अब एक ऐसी नयी लाल जर्सी और सतरंगी कलंगी वाली सी.पी.आई. (एम.एल.) की टीम मैदान में उतरी है।

जहाँ तक उन सच्चे क्रान्तिकारी ग्रुपों का सवाल है, जिन्हें एक अखिल भारतीय पार्टी बनाने का काम करना था, तो उनका ठहराव भी गम्भीर है। पिछले अट्ठाइस वर्षों से एकता-प्रयासों का हर नया सिलसिला तमाम दावों को झुठलाते हुए बिखर गया। क्यों? इस पर सोचा जाना चाहिए। आशावाद अति की सीमा पर पहुँचकर नियतिवाद बन जाता है जो लकीर की फ़क़ीरी का मार्गदर्शक सिद्धान्त होता है।

सच्चाई यह है कि भारत में 1967 के नक्सलबाड़ी के महान किसान-उभार के बाद नयी पार्टी बनाने की जो नयी शुरुआत होनी थी, वह नेतृत्व की उसूली कमज़ोरियों के कारण अति वामपन्थी दुस्साहसवाद के मध्यमवर्गीय रोग का शिकार हो गयी। जनता के विभिन्न वर्गों का जनसंगठन खड़ा करने, रोज़मर्रा के आर्थिक-राजनीतिक मुद्दों पर उनके संयुक्त मोर्चे को क्रमशः मज़बूत बनाने के बजाय आतंकवाद की लाइन अपनायी गयी। चीन की पार्टी का अन्धानुकरण स्वयं उसी पार्टी की परम्परा को छोड़कर किया गया। भारत की ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण किये बिना क्रान्ति का कार्यक्रम तय कर लिया गया।

ग़लत स्थापनाओं-धारणाओं के अमल ने ठहराव और टूट-फूट के अलावा किसी और चीज़ को जन्म नहीं दिया। एक होने की सदिच्छा में 1970 की पार्टी को जीवित करने का सपना लेकर सर्वहारा क्रान्तिकारी चलते रहे हैं, लेकिन चौथाई शताब्दी से भी अधिक समय तक इस काम में लगातार असफल होते रहने के बुनियादी कारणों पर सोचने की जहमत वे नहीं मोल लेते।

हमारी यह पक्की सोच है कि 1967 से शुरू हुए कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास के दौर का भी अब अवसान हो चुका है और अब एकदम नये सिरे से एक क्रान्तिकारी पार्टी के गठन और निर्माण के सवाल पर सोचा जाना चाहिए। सर्वहारा क्रान्तिकारी तत्त्व आज भी कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी शिविर के ग्रुपों की क़तारों में ही सर्वाधिक हैं। पर इन ग्रुपों के संघटक तत्त्व भले क्रान्तिकारी हों, इनकी संगठनात्मक बनावट-बुनावट मार्क्सवाद के अनुरूप नहीं है, क्रान्तिकारी नहीं है। क़तारें क्रान्तिकारी हैं पर संगठन जनवादी केन्द्रीयता के उसूलों के बजाय या तो नौकरशाहाना केन्द्रीयता लागू कर रहे हैं, या फिर ढीला-ढाला संघवाद, या फिर दोनों ही एक साथ। साथ ही, इन ग्रुपों के नेतृत्व का एक बड़ा हिस्सा आज मार्क्स से लेकर माओ तक की दुहाई देता हुआ कठमुल्लावाद से अवसरवाद की दिशा में अग्रसर है।

इन हालात में क्रान्तिकारी तत्त्वों को नये सिरे से एकजुट करने तथा पूँजीवाद के लगातार गहराते कोप-कहर से बदहाल सर्वहारा और मध्यम वर्ग की निचली क़तारों के विद्रोही नौजवानों की नयी क्रान्तिकारी भर्ती के द्वारा एक नयी सर्वहारा पार्टी खड़ी करने के लिए एक क्रान्तिकारी मज़दूर अख़बार को माध्यम और केन्द्र बनाया जाना चाहिए। इस अख़बार में हमारे आज के समाज के आर्थिक सम्बन्धों, राजनीतिक तन्त्र और सामाजिक-सांस्कृतिक ढाँचे पर बहस चलनी चाहिए और क्रान्ति के सही-सटीक स्वरूप

और मार्ग का निर्धारण किया जाना चाहिए।

वैसे तो ऐसी बहस नक्सलबाड़ी के बाद के दौर में ही चलनी चाहिए थी और चली भी, पर उसे वामपन्थी दुस्साहसवाद द्वारा दबा दिया गया क्योंकि उसके लेखे सब कुछ तय था, पूर्वनिश्चित था। आज ऐसी स्वस्थ बहस से वे ज़िम्मेदार तत्त्व व़+तई नहीं कतरा सकते जो आत्मतुष्ट नहीं हैं। यह प्रतीक्षा नहीं की जा सकती कि फिर कोई नक्सलबाड़ी होगा और क्रान्तिकारी उसके आलोक में एक हो जायेंगे। ऐसा होगा भी नहीं। पार्टी वैज्ञानिक विचारधारा के मार्गदर्शन में व्यवहार और सिद्धान्त की प्रक्रिया से गुज़रकर एक कार्यक्रम पर बनेगी।

●

हमारी अपनी सोच यह है कि द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर काल की आधी सदी की यात्रा के बाद आज भूमण्डलीकरण के झण्डे के साथ साम्राज्यवाद आर्थिक नवउपनिवेशवाद के दौर में प्रविष्ट हो चुका है जब भारत जैसे देश भी एक नयी समाजवादी क्रान्ति की मंज़िल में प्रविष्ट हो चुके हैं और अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाएँ आज हमारे लिए नये सन्दर्भों में और अधिक प्रासंगिक हो चुकी हैं।

बहरहाल, यहाँ भारतीय क्रान्ति के स्वरूप सम्बन्धी अपनी सोच की हम तफ़सील से चर्चा नहीं करेंगे। बस इतना स्पष्ट करना चाहेंगे कि हम इस मसले पर पूरी बहस के लिए तैयार हैं।

साथ ही, एक क्रान्तिकारी मज़दूर अख़बार को केन्द्र में रखकर क्रान्तिकारी पार्टी बनाने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का दूसरा मतलब यह भी है कि इस अख़बार के ज़रिये औद्योगिक मज़दूरों, असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों, बेकार और अस्थायी मज़दूरों तथा गाँवों के सभी मज़दूरों के बीच सर्वहारा क्रान्ति के विज्ञान का, उसके मक़सद का, इसके रास्ते का प्रचार किया जाये और उनके बीच से क्रान्तिकारी क़तारों में नयी भर्ती की जाये। ऐसे अख़बार को मज़दूरों में एक प्रचारक, शिक्षक और आन्दोलनकर्ता के रूप में ही नहीं, एक संगठनकर्ता के रूप में भी जाना होगा। ऐसे अख़बार में उनकी जीवन-स्थितियों और संघर्षों की भी रपटें छपनी चाहिए और नतीजे के तौर पर ज़रूरी काम निकालने वाले विश्लेषण भी किये जाने चाहिए।

हमारी सोच है कि बहस के मुद्दे केवल यही नहीं हैं कि आज का सही मार्क्सवाद क्या है और भारतीय क्रान्ति का स्वरूप क्या है? बहस का एक मुद्दा संगठन का ढाँचा और उसका सिद्धान्त – जनवादी केन्द्रीयता का प्रश्न भी है क्योंकि जनवादी केन्द्रीयता पर काम करने वाला संगठन ही जनदिशा को लागू कर सकता है। साथ ही, जनदिशा लागू करने में लगा संगठन ही अपनी क़तारों की उन्नत राजनीतिक चेतना के आधार पर जनवादी केन्द्रीयता लागू कर सकता है। इस मामले में भी अक्टूबर क्रान्ति के अनुभव हमारे लिए बहुत क़ीमती हैं।

अक्टूबर क्रान्ति और उत्तरवर्ती चीनी क्रान्ति का एक अनुभव यह भी है कि सर्वहारा क्रान्ति के लिए अन्य शोषित वर्गों के साथ संयुक्त मोर्चा भी ज़रूरी है। भारत जैसे पिछड़े देश में मज़दूर वर्ग जब तक शहरी ग़रीबों के साथ ही गाँव के ग़रीबों के साथ भी दृढ़ मोर्चा नहीं बनायेगा, तब तक वह समाजवादी क्रान्ति कर ही नहीं सकता। मध्यवर्ग सिर्फ़ ढुलमुल दोस्त की भूमिका निभायेगा और निर्णायक संघर्ष में उसका एक हिस्सा जनता के साथ होगा जबकि दूसरा हिस्सा पूँजीवाद के प्रति वफ़ादार होगा। चीन में राष्ट्रीय पूँजीपति और धनी किसान जनवादी क्रान्ति के ढुलमुल दोस्त थे। आज के भारत में समूचे पूँजीपति और मुनाफ़े के लिए खेती करने वाले धनी मालिक किसान साम्राज्यवादियों के साथ जनता के विरोधी पाले में खड़े हैं।

●

अक्टूबर क्रान्ति ने पेरिस कम्यून के इस सबक़ को और अधिक ठोस किया था कि सर्वहारा क्रान्ति फ़ैसलाकुन ढंग से हिंसक और सशस्त्र ही हो सकती है। पूँजीपति स्वेच्छा से राज्यसत्ता सौंपकर अपनी क़ब्र नहीं खोदेंगे। क्रान्तिकारी पार्टी को एक ऐसी क्रान्ति के संचालन और नेतृत्व के लिए पहले दिन से ही तैयार रहना होता है ताकि सही समय पर सही ढंग से वह मज़दूरों को इसके लिए तैयार कर सके। इस बात का अध्ययन ज़रूरी है कि बोल्शेविकों ने यूनियनों के कार्यों में भागीदारी करते हुए और सोवियतों में संगठित मज़दूरों-किसानों को अपने नेतृत्व के तहत लाने का काम करते हुए हथियारबन्द बग़ावत के अनुकूल मौक़े का लाभ किस प्रकार उठाया और किस प्रकार इसकी तैयारी की जाये। यहाँ इतना जोड़ देना ज़रूरी है कि आज के रूस और पूर्वी यूरोप के देशों की नहीं, बल्कि भारत जैसे देशों की बुर्जुआ राज्यसत्ता भी, ज़ारकालीन रूसी राज्यसत्ता से अधिक उन्नत, आधुनिक, व्यापक आधारों वाली और मज़बूत है। उन्नत क़िस्म के पूँजीवादी जनवाद के रूप में पूँजीवादी अधिनायकत्व यहाँ अधिक मज़बूत है। पिछले पचास वर्षों में हुए पूँजीवादी विकास ने, गाँवों में घोर प्रतिक्रियावादी वर्ग के रूप में कुलकों और पूँजीवादी भूस्वामियों का संगठित विकास किया है जो सत्ता की हिस्सेदारी में इज़ारेदार वित्तीय-औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का छोटा भागीदार है। पूँजी की सत्ता से जुड़े अन्य परजीवी वर्गों का भी काफ़ी विस्तार हुआ है। बैंकों, अन्य वित्तीय संस्थाओं से लेकर सरकारी दफ़्तरों तक के ज़रिये सुदूरवर्ती गाँवों तक पूँजी और पूँजीवादी राज्यसत्ता की पकड़ मज़बूत हुई है।

यही नहीं, भारतीय राज्यसत्ता का दमनतन्त्र – सेना-पुलिस और खुफिया तन्त्र भी ज़ारशाही से अधिक उन्नत है और साम्राज्यवाद किसी भी तरह के क्रान्तिकारी उभार की स्थिति में इसे हर तरह की मदद देने के लिए चाक-चौबन्द खड़ा है।

ऐसी स्थिति में क्रान्तिकारी पार्टी के बारे में लेनिन और अक्टूबर क्रान्ति की शिक्षाएँ हमारे समय और हमारे देश पर अक्टूबर क्रान्ति के समय से भी अधिक लागू

होती हैं।

पूँजीपति वर्ग से बलपूर्वक राज्यसत्ता छीनने का काम केवल सर्वहारा वर्ग की ऐसी ही पार्टी कर सकती है जो चवन्निया मेम्बरी वाली जन-पार्टी न होकर कैडर-पार्टी हो, जिसके सदस्य तपे-तपाये क्रान्तिकारी कार्यकर्ता हों जो सही मायने में मज़दूरों के हरावल हों, जिस पार्टी की सदस्यता केवल सदस्यता शुल्क देने और कार्यक्रम मानने वालों को न दी जाती हो, बल्कि सदस्य बनने के लिए किसी भी मोर्चे या जनसंगठन की पार्टी इकाई/सेल/फ़्रैक्शन/न्यूक्लियस या कमेटी में सक्रिय सदस्य होना ज़रूरी हो। सर्वहारा वर्ग की ऐसी क्रान्तिकारी पार्टी का मेरुदण्ड पेशेवर क्रान्तिकारी (यानी पूरावक़्ती क्रान्तिकारी कार्यकर्ता) होते हैं। ऐसी पार्टी पहले ही दिन से पूँजीवादी राज्यसत्ता को उखाड़ फेंकने के लक्ष्य को सामने रखकर अपनी तैयारी करती है और अपने को कभी भी पूँजीवादी राज्यसत्ता की मर्ज़ी पर छोड़कर निश्चिन्त नहीं होती है। वह जानती है कि क्रान्ति को कुचलने के लिए पूँजीपति वर्ग सबसे पहले उसके हरावल दस्ते को, सर्वहारा वर्ग की पार्टी को नेस्तनाबूद करने की कोशिश करता है। अतः संसदीय चुनाव सहित पूँजीवादी जनवाद के सभी खेलों के भ्रम में न पड़कर सर्वहारा पार्टी अपने ढाँचे और कार्यप्रणाली को हर हमेशा गुप्त रखती है। वह संघर्ष के क़ानूनी रूपों का इस्तेमाल करती है, उपयोगी होने पर कार्यनीति के तौर पर, क्रान्तिकारी प्रचार के लिए पूँजीवादी संसदीय चुनावों और संसद का भी इस्तेमाल करती है – पर वह कभी भी अपने को एक पूरी तरह क़ानूनी और संसदीय पार्टी में रूपान्तरित नहीं करती जैसाकि आज हमारे देश में सी. पी.आई., सी.पी.एम. और सी.पी.आई. (एम.एल., लिबरेशन) ने कर लिया है। लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक इसी मुद्दे पर मेंशेविकों से अलग हो गये थे। आगे चलकर, कार्ल काउत्स्की के नेतृत्व में यूरोप की मज़दूर पार्टियों ने भी जब क्रान्ति का रास्ता छोड़ा तो अपने को पूरी तरह खुली, क़ानूनी और संसदीय पार्टियों में रूपान्तरित कर लिया। लेनिन ने इसका कारण स्पष्ट करते हुए बताया कि ऐसा सिर्फ़ वही ग़द्दार कर सकते हैं, जिन्होंने बुर्जुआ वर्ग का तख़्ता पलटने के बजाय उनकी गोद में बैठना स्वीकार कर लिया हो।

लेनिन की पार्टी अक्टूबर क्रान्ति को अंजाम देने में इसलिए सफल हो सकी, क्योंकि उसने मेंशेविकों और कार्ल काउत्स्की के चेले-चाटियों से अलग अपने को सच्चे क्रान्तिकारी साँचे में ढाला था और सशस्त्र क्रान्ति के लिए व्यापक, लम्बी और पूरी तैयारी की थी।

लेनिन की पार्टी ट्रेडयूनियनों में मज़दूरों को संगठित करते हुए महज़ आर्थिक माँगों पर ही लड़ने के बजाय राजनीतिक अधिकारों को लेकर भी लड़ी और क्रान्तिकारी प्रचार के द्वारा उसने मज़दूरों को सर्वहारा वर्ग के ऐतिहासिक मिशन से परिचित कराया। लेनिन की पार्टी ने मौक़ा देखकर चुनाव में भी हिस्सा लिया पर चुनाववादी नहीं बनी, बल्कि ज़ार के नक़ली जनवाद का पर्दाफाश करने का काम किया। ज़ार लाख चाहकर

भी बोल्शेविक पार्टी को नष्ट नहीं कर सका। और न ही केरेंस्की हुकूमत ही ऐसा कर पायी। और जैसे ही क्रान्तिकारी संकट और उभार का काल आया, पार्टी ने उसका सही ढंग से उपयोग करके मज़दूरों को शस्त्र-सज्जित करने का काम किया, सेना के बड़े हिस्से को अपने साथ ले लिया तथा शीतप्रासाद पर क़ब्ज़े से इतिहास का एक नया अध्याय लिखना शुरू कर दिया।

आज अक्टूबर क्रान्ति का नया संस्करण रचने के लिए संकल्पबद्ध सर्वहारा क्रान्तिकारियों के लिए ज़रूरी है कि वे बोल्शेविक पार्टी जैसी इस्पाती साँचे में ढली क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने की कोशिश करें, जो वैचारिक रूप से सुदृढ़ हो, जो कैडर-आधारित पार्टी हो, पेशेवर क्रान्तिकारी जिसके मेरुदण्ड हों, जो संघर्ष के हर रूप को अपनाने के लिए तथा अन्तिम निर्णायक संघर्ष के लिए शुरू से ही तैयार हो तथा क़ानूनी-संसदीय विभ्रमों का शिकार न हो। यह पार्टी जनवादी केन्द्रीयता के बोल्शेविक उसूलों पर ही संगठित हो सकती है। ऐसी ही पार्टी ट्रेडयूनियनों और जनता के सभी वर्गों के जनसंगठनों को क्रान्तिकारी ढंग से संगठित कर सकती है, सर्वहारा वर्ग के साथ जनता के सभी वर्गों का संयुक्त मोर्चा क़ायम कर सकती है और लम्बी तैयारी तथा अभ्यास के बाद, अनुकूल समय को पहचान कर आम बग़ावत का आह्वान कर सकती है। अक्टूबर क्रान्ति की इस शिक्षा को भुलाने वाले लोग लेनिन का नाम लेते हुए भी वास्तव में काउत्स्की, ख्रुश्चेव और देङ सियाओ-पिङ के अनुगामी होते हैं जो वास्तव में पूँजीवादी व्यवस्था की दूसरी-तीसरी सुरक्षा पंक्ति की भूमिका निभाते हैं। समाजवाद की पराजय में अहम भूमिका निभाकर इन्होंने पूँजीवाद की "ऐतिहासिक" सेवा की है और अभी भी ये अपने काम में लगे हुए हैं। मज़दूर वर्ग को इनसे सावधान रहना होगा।

महान अक्टूबर क्रान्ति के पीछे एक मूल बात तपे-तपाये बोल्शेविक क्रान्तिकारियों की जनता के प्रति गहरी निष्ठा थी। लम्बे समय तक तरह-तरह के प्रयोग करते हुए उन्होंने सर्वहारा वर्ग की आर्थिक-राजनीतिक माँगों को उठाकर संघर्ष के तरीक़े ईज़ाद किये और साथ ही सतत राजनीतिक प्रचार की कार्रवाई चलाते हुए उन्नत चेतना वाले मज़दूरों के बीच से कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की हरावल पाँतों में क़ुर्बानी के जज़्बे से लैस सिपाही भर्ती किये।

बोल्शेविकों ने मध्यमवर्गीय भटकाव के ख़िलाफ़ अन्त तक समझौताहीन संघर्ष चलाया। गाँव के ग़रीबों के बीच भी उन्होंने लगातार कम्युनिस्ट प्रचार की कार्रवाई चलायी और ग़रीब तथा मध्यम किसान को क्रान्ति का दोस्त माना, पर भू-स्वामित्व के प्रति किसानी आस्था और प्रतिक्रियावादी किसानी कूपमण्डूकता के ख़िलाफ़ संघर्ष में उन्होंने कभी कोताही नहीं की।

बोल्शेविक क्रान्ति की सफलता के पीछे, एक मूल कारण यह भी था कि परिस्थितियों के किसी भी मूल्यांकन या क्रान्ति के कार्यक्रम के किसी भी पहलू को जड़सूत्र के समान पकड़कर बैठ जाने के बजाय लेनिन और उनके कामरेड ठोस परिस्थितियों का ठोस

विश्लेषण करके क्रान्ति की रणनीति और रणकौशल में लगातार बदलाव करते रहते थे। एक उदाहरण लें। क्रान्तिपूर्व दो दशकों के दौरान बोल्शेविक पार्टी ने अपने भूमि कार्यक्रम में दर्जनों सुधार किये और ज़ार के शासन द्वारा चलाये गये प्रतिवादी भूमि सुधार के एक-एक क़दम को अपने अध्ययन का विषय बनाया। क्रान्ति के बाद समाजवादी क्रान्तिकारियों की तमाम सही बातों को उन्होंने बेहिचक अपना लिया। इसके समान्तर, भारत के कम्युनिस्टों का व्यवहार देखें। कम्युनिस्ट पार्टी बनने से लेकर तेलंगाना संघर्ष तक भूमि प्रश्न पर कोई सुसंगत लेखन या बहस मौजूद ही नहीं है। तेलंगाना संघर्ष के बाद हुए ज़मींदारी उन्मूलन से लेकर नक्सलबाड़ी उभार के बाद कृषि क्षेत्र में हुए भारी पूँजी निवेश की नीतियों और विभिन्न पार्टियों की सरकारों द्वारा किये गये पूँजीवादी भूमि सुधारों पर कोई भी सुसंगत बहस नहीं हुई। दूसरे महायुद्ध के बाद की आधी सदी के अहम बदलावों के बावजूद यहाँ के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों का आज भी यह मानना है कि भारत आज भी एक अर्द्धसामन्ती-अर्द्धऔपनिवेशिक देश है जहाँ भूमि क्रान्ति का प्रश्न केन्द्रीय है।

विडम्बना तो यह है कि इस स्थापना पर जब प्रश्न भी उठाये गये तो उन्हें महज़ कुछ फ़तवे देकर, कुछ लेबल चस्पाँ करके दरकिनार कर दिया गया।

ठोस परिस्थितियों का लगातार विश्लेषण करने और अपनी रणनीति में ज़रूरी तब्दीली के लिए बोल्शेविकों के तैयार रहने का सबसे जीता-जागता उदाहरण है – लेनिन की अप्रैल थीसिस, क्रान्ति की तैयारी और फिर एकदम सटीक समय पर आम बग़ावत का आह्वान। फ़रवरी में ज़ार की सत्ता के पतन के बाद केरेन्स्की सरकार सत्तारूढ़ हुई और महज़ दो माह बाद लेनिन इस नतीजे पर पहुँचे कि रूस में समय सर्वहारा समाजवादी क्रान्ति के अनुकूल है। यदि एकदम सटीक मूल्यांकन के आधार पर बोल्शेविकों ने सही समय पर फ़ैसलाकुन चोट नहीं की होती तो केरेन्स्की की बुर्जुआ हुकूमत को सँभल जाने का मौक़ा मिल जाता और उसे यूरोपीय पूँजीवादी ताक़तों से मदद भी मिल जाती।

●

बोल्शेविकों की सफलता का एक बुनियादी कारण उनकी विचारधारात्मक तैयारी और अपनी पाँतों में समय-समय पर सिर उठाने वाले ग़ैर-सर्वहारा विचारों के विरुद्ध उनका सतत विचारधारात्मक संघर्ष रहा। क्रान्ति की सफलता की बुनियादी गारण्टी के तौर पर लेनिन ने पार्टी की विचारधारात्मक समझ की गहराई और दृढ़ता पर लगातार बल दिया और विचारधारात्मक संघर्षों में विरोधी को कभी भी रत्तीभर छूट नहीं दी। ऐसे किसी भी संघर्ष को उन्होंने कभी भी एक मिनट के लिए टाला नहीं।

बोल्शेविक क्रान्ति की तैयारियों में सर्वोपरि विचारधारात्मक तैयारी ही थी। मेंशेविकों ने और प्लेख़ानोव ने जब संगठन के ढाँचे को जन-पार्टी के आधार पर एक बुर्जुआ

ढंग-ढर्रे पर ढालना चाहा तो उन पर क़रारी चोट करते हुए लेनिन ने अपना रास्ता अलग कर लिया। इसी तरह दूसरे इण्टरनेशनल में कार्ल काउत्स्की की रहनुमाई में यूरोप के अधिकांश कम्युनिस्टों ने जब अर्थवाद, संसदवाद और ट्रेडयूनियनवाद का रास्ता पकड़ा, जब उन्होंने राज्य और क्रान्ति विषयक मार्क्सवाद की बुनियादी शिक्षाओं में तोड़-मरोड़ की कोशिश की तथा जब उन्होंने अपने सांगठनिक ढाँचे को पूरी तरह खुला और क़ानूनी बनाकर उसे बुर्जुआ राज्यसत्ता की मर्ज़ी पर छोड़ दिया तो लेनिन ने अलग-थलग पड़ जाने का ख़तरा मोल लेकर भी उनके विरुद्ध फ़ैसलाकुन संघर्ष चलाया और दूसरे इण्टरनेशनल से अपना रास्ता अलग कर लिया। इसके ठीक बाद सम्पन्न अक्टूबर क्रान्ति ने लेनिन के मार्ग को सही सिद्ध किया और बुज़ुर्ग खुर्राट काउत्स्की अपने चेले-चपाटों सहित इतिहास की कचड़ा-पेटी के हवाले हो गया। याद दिलाने की ज़रूरत नहीं कि आगे चलकर टीटो और ख्रुश्चेव के चेलों का भी यही हश्र हुआ तथा अभी से यह घोषणा की जा सकती है कि देङ सियाओ-पिङ के अनुयायियों की भी यही गत होनी है। अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण अपने निर्माण की प्रक्रिया में ही संसदवादी-अर्थवादी वामपन्थ, यानी सामाजिक जनवाद और संशोधनवाद के सभी रूपों के ताबूत में आख़िरी कील ठोंकने का काम करेंगे। विचारधारात्मक संघर्ष में सामाजिक जनवाद से एक-एक मोर्चा लड़कर ही, बोल्शेविक क्रान्ति की सफलता की मंज़िल तक एक-एक क़दम आगे बढ़े। इतिहास का यह सबक़ आज हमारे लिए लेनिन के समय से भी कहीं अधिक प्रासंगिक हो उठा है।

●

आज इस सदी के अन्तिम वर्षों में पीछे मुड़कर अक्टूबर क्रान्ति की ऐतिहासिक महत्ता के बारे में जब हम सोचते हैं तो निचोड़ के तौर पर इस युगान्तरकारी घटना की कुछ ऐसी अहम शिक्षाओं को रेखांकित किया जा सकता है, जिन्हें उत्तरवर्ती क्रान्तियों ने भी अपनी सफलताओं-असफलताओं से सत्यापित किया।

(1) अक्टूबर क्रान्ति ने मार्क्सवाद की इस बुनियादी शिक्षा को सत्यापित किया और यह आज भी सही है कि सर्वहारा क्रान्तियाँ महज़ बग़ावत नहीं बल्कि सचेतन क्रान्तियाँ ही हो सकती हैं। इसके लिए मज़दूर वर्ग के हरावल के तौर पर देश स्तर पर एक ऐसी एकीकृत क्रान्तिकारी पार्टी का होना अनिवार्य है, जो प्रकृति और समाज के अध्ययन के सारतत्त्व के रूप में अर्जित सर्वहारा क्रान्ति के विज्ञान से – मार्क्सवाद-लेनिनवाद की विचारधारा से लैस हो।

(2) सर्वहारा वर्ग की पार्टी विचारधारात्मक शुद्धता सतत विचारधारात्मक संघर्षों से ही अर्जित कर सकती है। एक पूँजीवादी समाज के भीतर ही पैदा होने और काम करने के चलते पार्टी में ग़ैरसर्वहारा प्रवृत्तियाँ और विचार लगातार सिर उठाते रहते हैं। केवल आलोचना-आत्मलोचना और दो लाइनों के संघर्ष के द्वारा ही इनका सफाया किया

जा सकता है। लेनिन ने यदि मेंशेविकों, प्लेख़ानोव और काउत्स्की के ख़िलाफ़ संघर्ष नहीं किया होता तो क्रान्ति करने के बजाय बोल्शेविक पार्टी भी सी.पी.आई.-सी.पी.एम. जैसी संशोधनवादी, अर्थवादी, संसदमार्गी पार्टी बनकर रह गयी होती। सामाजिक जनवाद या दक्षिणपन्थी अवसरवाद से हर लड़ाई लड़कर ही हम भी आज सही ढंग से एक क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने की दिशा में एक-एक क़दम आगे बढ़ सकते हैं। लेनिन की इस शिक्षा को आज याद रखना ज़रूरी है कि मार्क्सवादी केवल वही है जो वर्ग-संघर्ष के साथ ही सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को भी स्वीकार करता है। आज कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी शिविर के भीतर भी दक्षिणपन्थी सिद्धान्त और व्यवहार की प्रवृत्तियाँ और रुझानें बहुतायत में सिर उठा रही हैं, कठिन विचारधारात्मक संघर्ष में इनका निर्मूलन किये बग़ैर क्रान्तिकारियों की देशव्यापी एकता व+तई नहीं क़ायम की जा सकती।

(3) उपरोक्त बिन्दु के साथ ही यह याद रखना ज़रूरी है कि अतिवामपन्थी भटकाव भी साररूप में मध्यवर्गीय जल्दबाज़ी, अराजकतावाद या जनता में आस्था न रखने की ही प्रवृत्ति से पैदा होता है और लेनिन ने इसे "बचकाना मर्ज़" की संज्ञा दी थी। सर्वहारा वर्ग और उसके सहयोगी वर्गों के व्यापक जनसंगठन खड़ा किये बग़ैर, उनकी आर्थिक और राजनीतिक माँगों को लेकर संघर्ष करते हुए क्रान्तिकारी प्रचार द्वारा उनको तैयार किये बग़ैर, किसी भी रूप में मुट्ठीभर क्रान्तिकारी यदि अपनी क़ुर्बानियों और बहादुरी के बूते पर राज्यसत्ता पलट देना चाहते हैं या यह सोचते हैं कि उनके संघर्षों-क़ुर्बानियों से प्रेरित जनता इन्क़लाब के लिए उठ खड़ी होगी तो यह ग़लत है। यह वामपन्थी दुस्साहसवादी सोच है। नक्सलबाड़ी के शानदार जनउभार के बाद, इसी भटकाव के चलते पार्टी-निर्माण व गठन तथा क्रान्तिकारी जन-कार्य भारी ऐतिहासिक नुक़सान उठा चुका है। आज भी, हालाँकि दक्षिणपन्थी भटकाव का ख़तरा मुख्य है, पर अतिवामपन्थी, अराजकतावादी भटकाव की धाराएँ क्रान्तिकारी आन्दोलन में मौजूद हैं। लेनिन की शिक्षाओं के आलोक में इनके विरुद्ध संघर्ष भी ज़रूरी है।

(4) हमारे देश में आज औद्योगिक सर्वहारा वर्ग लगभग पूरी तरह अर्थवाद और ट्रेडयूनियनवाद की जकड़बन्दी में उलझा हुआ है। ट्रेडयूनियन आन्दोलन पूरी तरह संशोधनवादी वामपन्थी दलों ओर पूँजीवादी पार्टियों की गिरफ़्त में है। सर्वहारा वर्ग को इस जकड़बन्दी से मुक्त करके ट्रेडयूनियन आन्दोलन को क्रान्तिकारी दिशा दिये बिना तथा सर्वहारा वर्ग के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक प्रचार की कार्रवाई लगातार चलाये बिना न तो सर्वहारा वर्ग की सही-सच्ची पार्टी खड़ी की जा सकती है और न ही सर्वहारा क्रान्ति की दिशा में एक क़दम भी आगे बढ़ा जा सकता है।

भारत में एक सच्ची लेनिनवादी पार्टी खड़ी करने में वही सफल हो सकेंगे जो मज़दूरों को संगठित करते हुए आर्थिक माँगों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी आन्दोलन खड़े करें और साथ ही मज़दूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार

की कार्रवाई चलाते हुए उनके बीच के उन्नत तत्त्वों को क्रान्तिकारी पार्टी में शामिल करें। क्रान्तिकारियों को तमाम बुर्जुआ और संशोधनवादी ट्रेडयूनियनों के भीतर क्रान्तिकारी मज़दूरों के सेल और केन्द्रक गठित करके काम करना चाहिए और अवसरवादी नेतृत्व को लगातार अलग-थलग करने की कोशिश करनी चाहिए। परिस्थिति के अनुसार, विभिन्न रूपों में मज़दूरों के अध्ययन मण्डल और रात्रि स्कूल भी संगठित किये जाने चाहिए। मज़दूर वर्ग के अगुवा तत्त्वों की पार्टी-भर्ती के द्वारा पार्टी-निर्माण के कार्य को पुख़्ता आधार देने के लिए, क्रान्तिकारी राजनीति के व्यापक प्रचार के लिए और क्रान्तिकारी ग्रुपों की क़तारों तक पार्टी निर्माण एवं गठन के कार्यभार के विविध पहलुओं, समस्याओं तथा इससे जुड़ी बहसों को पहुँचाने के लिए एक क्रान्तिकारी मज़दूर अख़बार को भारत में भी वही भूमिका निभानी है जो रूस में 'ईस्क्रा' ने और फिर उसके उत्तराधिकारी समानधर्मा अख़बारों ने निभायी।

(5) केवल वही पार्टी सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी हो सकती है जो अपने जन्मकाल से ही राज्यसत्ता के हर कोप-कहर का सामना करने के लिए तैयार हो। ऐसी पार्टी की सदस्यता सिर्फ़ गुप्त ही हो सकती है और वह ऐक्टिविस्ट स्तर से नीचे नहीं दी जा सकती। ऐसी पार्टी के मेरुदण्ड सिर्फ़ पेशेवर क्रान्तिकारी (पूरावक़्ती कार्यकर्ता) ही हो सकते हैं। खुले और क़ानूनी दायरों में, गुंजाइश होने पर, काम करती हुई भी एक क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी पूरी तरह क़ानूनी और संसदीय पार्टी कदापि नहीं हो सकती। उसका ढाँचा और कार्यप्रणाली हर-हमेशा गुप्त रहनी चाहिए। ऐसी पार्टी केवल जनवादी केन्द्रीयता के सांगठनिक उसूलों पर ही गठित की जा सकती है।

भारत के सर्वहारा क्रान्तिकारियों के कई ग्रुप आज लेनिन और अक्टूबर क्रान्ति की इन बुनियादी शिक्षाओं की अवहेलना कर रहे हैं। यह बेहद ख़तरनाक है और पतन की ओर ले जाने वाला है।

(6) अक्टूबर क्रान्ति की यह शिक्षा आज हमारे लिए बेहद उपयोगी है कि विचारधारा के प्रश्न पर अडिग रहते हुए उसी के आलोक में देश-विशेष की ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण किया जाना चाहिए और क्रान्ति का कार्यक्रम निर्धारित किया जाना चाहिए। अक्टूबर क्रान्ति की यह मूल्यवान शिक्षा है कि उसूलों में एकदम अनम्य रहते हुए कार्यनीति या रणकौशल के प्रश्नों पर अधिकतम सम्भव लचीला रुख़ अपनाया जाना चाहिए, तभी हर परिस्थिति का क्रान्ति की तैयारी के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

(7) अपने देश की ठोस परिस्थितियों के आधार पर यह तय करना बेहद ज़रूरी होता है कि सर्वहारा क्रान्ति के मित्र कौन हैं और शत्रु कौन? सर्वहारा वर्ग, अपने मित्र वर्गों को – मुख्यतः गाँव के ग़रीबों को साथ लिये बग़ैर, उनके साथ संयुक्त मोर्चा बनाये बग़ैर व+तई क्रान्ति नहीं कर सकता, यह बोल्शेविक क्रान्ति की एक बुनियादी शिक्षा है।

समाजवाद की आज की हार एक अस्थायी परिघटना है। यह कुछ समय की बात है। अक्टूबर क्रान्ति की मशाल बुझी नहीं है। बुझ ही नहीं सकती। दुनिया का सर्वहारा आगे बढ़ेगा और इसके नये संस्करण का निर्माण करेगा। पूँजीवाद के रोग और संकट लाइलाज हैं और उनका अन्त समाजवाद ही करेगा – पूँजीवाद का ही अन्त करके। नयी शताब्दी एक ऐसे ही भूकम्पकारी युग के रूप में आ रही है।

लेनिन ने साम्राज्यवाद के दौर में पूरब को क्रान्ति के तूफ़ान के केन्द्र के रूप में देखा था और चीन की क्रान्ति से तीन दशक पहले 'एशिया के जागरण' के चिह्न देखे थे। साम्राज्यवादी लूट के खुला चरागाह एशिया में आज फिर एक नये जागरण के संकेत मिल रहे हैं।

क्या यह जागृति एक नयी सर्वहारा क्रान्ति का सवेरा ला सकेगी? क्या सर्वहारा क्रान्तियों के नये चक्र में भारत का सर्वहारा वर्ग दुनिया के मज़दूरों के अग्रिम दस्तों में शामिल हो सकेगा? – इसका जवाब हमें अपने ठोस कार्यों से देना होगा, फ़ौलादी संकल्पों से देना होगा।

1905-07 की रूसी क्रान्ति की ख़ून से लथपथ हार के बाद लेनिन ने अपने जीवन की एकमात्र कविता लिखी थी जिसकी अन्तिम पंक्तियों के उद्दाम आशावाद को अक्टूबर क्रान्ति ने साकार कर दिखाया। विश्व सर्वहारा क्रान्तियों के पहले संस्करणों की हार के बाद, उम्मीदों से लबरेज़ इन पंक्तियों को हम इस विश्वास के साथ दुहराते हैं कि नयी सदी की नयी सर्वहारा क्रान्तियाँ इन्हें अवश्य साकार करेंगी क्योंकि यही इतिहास की गति है ओर यही इतिहास का सन्देश है –

हिम्मत से सीना तानो!
ये बुरे दिन जल्दी ही छूट जायेंगे
आज़ादी के दुश्मन के ख़िलाफ़ खड़े हो जाओ
एकजुट होकर!
बसन्त आयेगा...वह आ रहा है.. वह आ रहा है
अनोखी ख़ूबसूरत हमारी बहुवांछित
वह लाल आज़ादी
आगे आ रही है! देखो इधर
हमारी ओर...

('बिगुल', नवम्बर 1998, फ़रवरी '99 और मार्च-अप्रैल '99 में धारावाहिक प्रकाशित)

आग्नेय अक्टूबर

बोल्शेविकों ने विद्रोह की ज़ोरदार तैयारियाँ शुरू कीं। लेनिन ने कहा कि दोनों राजधानियों – मास्को और पेत्रोग्राद – में मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियों की सोवियतों में बहुमत हासिल करने के बाद, बोल्शेविक अपने हाथ में राज्यसत्ता ले सकते हैं, और उन्हें लेना चाहिए। तय किये हुए रास्ते पर नज़र डालते हुए, लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि 'जनता का बहुमत हमारे साथ है।' अपने लेखों और केन्द्रीय समिति और बोल्शेविक संगठनों के नाम अपने ख़तों में, लेनिन ने विद्रोह की एक विस्तृत योजना बनायी और बतलाया कि फ़ौजी दस्ते, जल-सेना और रेड गार्ड दस्तों को किस तरह इस्तेमाल करना चाहिए, विद्रोह की सफलता निश्चित करने के लिए पेत्रोग्राद के किन मुख्य स्थानों पर क़ब्ज़ा करना चाहिए, इत्यादि।

7 अक्टूबर को, लेनिन गुप्त रूप से फ़िनलैण्ड से पेत्रोग्राद आये। 10 अक्टूबर 1917 को, पार्टी की केन्द्रीय समिति की ऐतिहासिक बैठक हुई जिसमें अगले कुछ दिनों में सशस्त्र विद्रोह आरम्भ करने का फ़ैसला किया गया। पार्टी की केन्द्रीय समिति के ऐतिहासिक प्रस्ताव में, जिसे लेनिन ने लिखा था, कहा गया था :

"केन्द्रीय समिति यह समझती है कि रूसी क्रान्ति की अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति (जर्मन जल-सेना में विद्रोह, जो समूचे यूरोप में विश्व समाजवादी क्रान्ति का चरम प्रदर्शन है, रूस की क्रान्ति का गला घोंटने के उद्देश्य से साम्राज्यवादियों के बीच शान्ति की धमकी), साथ ही सैनिक परिस्थिति (रूसी पूँजीपतियों और केरेन्स्की एण्ड कम्पनी का यह निश्चित फ़ैसला कि पेत्रोग्राद जर्मनों को सौंप दिया जाये) और सोवियतों में सर्वहारा पार्टी का बहुमत हासिल करना,–यह सब और इसके साथ यह कि किसान-विद्रोह हो रहे हैं और आम जनता का विश्वास तेज़ी से पार्टी पर जम रहा है (मास्को के चुनाव), और अन्त में एक दूसरे कार्निलोव काण्ड के लिए जो खुली तैयारी हो रही है (पेत्रोग्राद से फ़ौजें हटाना, मास्को और मिंस्क में हमारी जनता की कार्रवाई वग़ैरह) पर विचार करें और फ़ैसला करें।" (लेनिन, संकलित रचनाएँ, अंग्रेज़ी संस्करण, खण्ड 2, पृष्ठ 135)

केन्द्रीय समिति के दो सदस्य, कामेनेव और ज़िनोवियेव, इस ऐतिहासिक प्रस्ताव के ख़िलाफ़ बोले और उन्होंने उसके विरुद्ध वोट दिया। मेंशेविकों की तरह, वे पूँजीवादी संसदीय जनतन्त्र का सपना देखते थे और मज़दूर वर्ग पर यह कहकर कीचड़ उछालते थे कि समाजवादी क्रान्ति करने के लिए वह काफ़ी मज़बूत नहीं है, कि वह सत्ता हाथ में लेने के लिए काफ़ी परिपक्व नहीं है।

हालाँकि इस बैठक में त्रात्स्की ने सीधे इस प्रस्ताव के ख़िलाफ़ वोट नहीं दिया, फिर भी उसने एक संशोधन रखा जिससे विद्रोह की सम्भावना नहीं के बराबर हो जाती और विद्रोह निष्फल हो जाता। उसने प्रस्ताव रखा कि सोवियतों की दूसरी कांग्रेस शुरू होने से पहले विद्रोह शुरू न किया जाये। इस प्रस्ताव का मतलब था – विद्रोह में विलम्ब करना, उसकी तारीख़ ज़ाहिर कर देना और अस्थायी सरकार को आगाह कर देना।

बोल्शेविक पार्टी की केन्द्रीय समिति ने विद्रोह का संगठन करने के लिए अपने प्रतिनिधियों को दोन्येत्स प्रदेश, यूराल, हैलसिंगफ़ोर्स, क्रोन्स्तात, दक्षिण-पश्चिमी मोर्चा और दूसरी जगहों पर भेजा। पार्टी ने ख़ासतौर से सूबों में विद्रोह का संचालन करने के लिए कामरेड बोरोशिलोव, मोलोतोव, जर्जिन्स्की, ओजानिकित्से, किरोव, कगानोविच, कुइबीशेव, फ़्रुन्जे, यारोस्लाव्स्की और दूसरे साथियों को मुक़र्रर किया। कामरेड ज्दानोव ने यूराल में शान्द्रिस्क की फ़ौज में काम जारी रखा। केन्द्रीय समिति के प्रतिनिधियों ने सूबों के बोल्शेविक संगठनों के प्रमुख सदस्यों को विद्रोह की योजना बतायी और पेत्रोग्राद के विद्रोह का समर्थन करने के लिए उन्हें तैयार रहने के लिए बटोरा।

पार्टी की केन्द्रीय समिति के निर्देश से, पेत्रोग्राद-सोवियत की एक क्रान्तिकारी फ़ौजी कमेटी बनायी गयी। यह संस्था विद्रोह का क़ानूनी तौर पर चलने वाला हेडक्वार्टर बन गयी।

उधर क्रान्ति-विरोधी भी जल्दी-जल्दी अपनी शक्ति बटोर रहे थे। फ़ौज के अफ़सरों ने एक क्रान्ति-विरोधी संगठन बनाया, जिसका नाम अफ़सरों की सभा था। हर जगह क्रान्ति विरोधियों ने लड़ाकू दस्ते बनाने के लिए हेडक्वार्टर क़ायम किये। अक्टूबर के अन्त तक, क्रान्ति विरोधियों की कमान में 43 लड़ाकू दस्ते बन गये। सेण्ट जॉर्ज के क्रॉस को मानने वालों के ख़ास दस्ते बनाये गये।

केरेन्स्की की सरकार ने शासन केन्द्र पेत्रोग्राद से मास्को ले जाने के सवाल पर विचार किया। इससे स्पष्ट हो गया कि शहर में विद्रोह रोकने के लिए वह पेत्रोग्राद को जर्मनों के हाथ सौंपने की तैयारी कर रही है। पेत्रोग्राद के मज़दूरों और सैनिकों के विरोध ने अस्थायी सरकार को पेत्रोग्राद में ही रहने पर मजबूर किया।

16 अक्टूबर को, पार्टी की केन्द्रीय समिति की एक विस्तृत बैठक हुई। इस बैठक में विद्रोह का संचालन करने के लिए एक पार्टी केन्द्र चुना गया, जिसके अगुआ कामरेड स्तालिन थे। यह पार्टी केन्द्र पेत्रोग्राद-सोवियत की क्रान्तिकारी फ़ौजी कमेटी का प्रमुख नेतृत्व था और समूचे विद्रोह का अमली संचालन उसके हाथ में था।

केन्द्रीय समिति की बैठक में, समर्पणवादियों – ज़िनोवियेव और कामेनेव ने विद्रोह का फिर विरोध किया। यहाँ मुँह की खाकर, उन्होंने विद्रोह के ख़िलाफ़, पार्टी के ख़िलाफ़ खुल्लमखुल्ला अख़बारों में लिखा। 18 अक्टूबर को, मेंशेविक अख़बार *नोवाया जीज्न (नव जीवन)* ने कामेनेव और ज़िनोवियेव का बयान छापा, जिसमें कहा गया था कि बोल्शेविक विद्रोह की तैयारी कर रहे हैं और वे (कामेनेव और ज़िनोवियेव) समझते हैं कि यह दुस्साहसपूर्ण जुआ खेलना है। इस तरह, कामेनेव और ज़िनोवियेव ने दुश्मन को केन्द्रीय समिति का विद्रोह

सम्बन्धी फ़ैसला बता दिया; उन्होंने यह प्रकट कर दिया कि कुछ ही दिनों में विद्रोह शुरू करने की योजना बनायी गयी है। यह ग़द्दारी थी। इस सिलसिले में, लेनिन ने लिखा था : "कामेनेव और ज़िनोवियेव ने सशस्त्र विद्रोह के बारे में अपनी पार्टी की केन्द्रीय समिति का फ़ैसला दग़ाबाज़ी से रोद्ज़ियांको और केरेन्स्की को बतला दिया है।" लेनिन ने केन्द्रीय समिति के सामने ज़िनोवियेव और कामेनेव को पार्टी से निकालने का सवाल रखा।

ग़द्दारों से चेतावनी पाकर, क्रान्ति के दुश्मन तुरन्त ही, इस बात के उपाय करने लगे कि विद्रोह को रोक दें और क्रान्ति के संचालक दल – बोल्शेविक पार्टी – का नाश कर दें। अस्थायी सरकार ने एक गुप्त बैठक बुलायी, जिसमें बोल्शेविकों का मुक़ाबला करने के लिए क्या उपाय किये जायें, इसका फ़ैसला हुआ। 19 अक्टूबर को, अस्थायी सरकार ने युद्ध के मोर्चे से जल्दी-जल्दी फ़ौजें पेत्रोग्राद बुलायीं। सड़कों पर भारी पहरा लगा दिया गया। क्रान्ति विरोधी ख़ासतौर से मास्को में भारी फ़ौज इकट्ठा करने में कामयाब हुए। अस्थायी सरकार ने एक योजना बनायी कि सोवियतों की दूसरी कांग्रेस शुरू होने से पहले बोल्शेविक केन्द्रीय समिति के हेडक्वार्टर स्मोल्नी पर हमला किया जाये और उस पर क़ब्ज़ा कर लिया जाये और बोल्शेविक संचालन-केन्द्र का नाश कर दिया जाये। इसी उद्देश्य से, हुकूमत ने पेत्रोग्राद में वह फ़ौज बुलायी जिसकी वफ़ादारी पर उसे भरोसा था।

लेकिन, अस्थायी सरकार की ज़िन्दगी के दिन और घण्टे भी गिनती के रह गये थे। समाजवादी क्रान्ति की विजय-यात्रा को अब कोई भी नहीं रोक सकता था।

21 अक्टूबर को, बोल्शेविकों ने सभी क्रान्तिकारी फ़ौजी दस्तों के पास क्रान्तिकारी फ़ौजी समिति के कमिसार भेजे। विद्रोह होने से पहले के बचे हुए दिनों में फ़ौजी दस्तों, मिलों और कारख़ानों में कार्रवाई की ज़ोरदार तैयारी की गयी। युद्धपोत *अव्रोरा* और *जारियास्वोबोदी* के लिए भी निश्चित निर्देश भेजे गये।

पेत्रोग्राद सोवियत की एक बैठक में, त्रात्स्की ने डींग हाँकने की जीम में दुश्मन को वह तारीख़ बतला दी जब बोल्शेविक सशस्त्र विद्रोह शुरू करने वाले थे। केरेन्स्की सरकार विद्रोह को असफल न कर दे, इसलिए पार्टी की केन्द्रीय समिति ने फ़ैसला किया कि निश्चित किये हुए समय से पहले ही विद्रोह शुरू कर दिया जाये और आख़िरी मंज़िल तक ले जाया जाये। उसने विद्रोह की तारीख़ सोवियतों की दूसरी कांग्रेस के शुरू होने से पहले के दिन रखी।

24 अक्टूबर (6 नवम्बर) को सुबह तड़के, केरेन्स्की ने हमला शुरू कर दिया। उसने बोल्शेविक पार्टी के केन्द्रीय पत्र *रबोचीपूत (मज़दूर पथ)* को बन्द करने का हुक्म दिया और सम्पादकीय दफ़्तर और बोल्शेविकों के छापेख़ाने पर हथियारबन्द गाड़ियाँ भेजीं। लेकिन 10 बजे सबेरे तक, कामरेड स्तालिन के निर्देश पर, रेड गार्डों के दस्तों और क्रान्तिकारी सैनिकों ने हथियारबन्द गाड़ियों को पीछे ठेल दिया और छापेख़ाने और *रबोचीपूत* के सम्पादकीय दफ़्तरों पर और ज़्यादा पहरा बिठा दिया। लगभग 11 बजे सबेरे *रबोचीपूत* प्रकाशित हुआ, जिसमें अस्थायी सरकार का तख़्ता उलट देने के लिए आह्वान था। उसी समय, विद्रोह के पार्टी केन्द्र के निर्देश से क्रान्तिकारी सैनिकों और रेड गार्डों के दस्ते स्मोल्नी की तरफ़ दौड़ाये गये।

विद्रोह शुरू हो गया।

24 अक्टूबर की रात को, लेनिन स्मोल्नी आ पहुँचे और उन्होंने ख़ुद विद्रोह के संचालन का भार सँभाला। उस रातभर फ़ौज के क्रान्तिकारी दस्ते और रेड गार्डों के जत्थे बराबर स्मोल्नी आते रहे। बोल्शेविकों ने शीतप्रासाद घेरने के लिए, जहाँ अस्थायी सरकार ने अपना अड्डा बनाया था, उन्हें राजधानी के केन्द्र की तरफ़ भेजा।

25 अक्टूबर (7 नवम्बर) को, रेड गार्डों के दस्तों और क्रान्तिकारी सैनिकों ने रेलवे स्टेशनों, डाकख़ानों, तारघरों, मन्त्री-गृहों और राज्य बैंक पर क़ब्ज़ा कर लिया।

प्रेद पार्लियामेण्ट भंग कर दी गयी।

बोल्शेविक केन्द्रीय समिति और पेत्रोग्राद सोवियत का हेडक्वार्टर, स्मोल्नी क्रान्ति का हेडक्वार्टर बन गया, जहाँ से लड़ाई के बारे में सभी हुक्म भेजे जाते थे।

पेत्रोग्राद के मज़दूरों ने उन दिनों दिखला दिया कि बोल्शेविक पार्टी की देखरेख में उन्होंने कैसी महान शिक्षा पायी है। फ़ौज के क्रान्तिकारी दस्तों ने, जिन्हें बोल्शेविकों के काम ने विद्रोह के लिए तैयार किया था, नपे-तुले ढंग से लड़ाई की आज्ञाओं का पालन किया और वे रेड गार्डों के दस्तों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़े। जल सेना फ़ौज से पीछे न रही। क्रोन्स्तात बोल्शेविक पार्टी का गढ़ था और बहुत दिन पहले ही अस्थायी सरकार का प्रभुत्व मानने से इन्कार कर चुका था। युद्धपोत *अव्रोरा* ने अपनी तोपें शीतप्रासाद की तरफ़ मोड़ दीं और, 25 अक्टूबर को, उनकी घन गरजन ने एक नया युग आरम्भ किया, महान समाजवादी क्रान्ति का युग आरम्भ किया।

25 अक्टूबर (7 नवम्बर) को, बोल्शेविकों ने "रूस के नागरिकों के नाम" एक घोषणापत्र निकाला। इसमें कहा गया था कि पूँजीवादी अस्थायी सरकार हटा दी गयी है और राज्यसत्ता सोवियतों के हाथ में आ गयी है।

अस्थायी सरकार ने कैडेटों और लड़ाकू जत्थों की छत्रच्छाया में शीतप्रासाद में शरण ली थी। 25 अक्टूबर की रात को क्रान्तिकारी मज़दूरों, सैनिकों और जहाज़ियों ने शीतप्रासाद पर हल्ला बोलकर क़ब्ज़ा कर लिया और अस्थायी सरकार को गिरफ़्तार कर लिया।

पेत्रोग्राद में सशस्त्र विद्रोह की विजय हुई।

सोवियतों की दूसरी अखिल रूसी कांग्रेस 25 अक्टूबर (7 नवम्बर) 1917 की शाम को 10 बजकर 45 मिनट पर स्मोल्नी में शुरू हुई, जबकि पेत्रोग्राद का विद्रोह विजय गौरव से दमक रहा था और राजधानी में सत्ता सचमुच पेत्रोग्राद सोवियत के हाथ में आ गयी थी।

कांग्रेस में बोल्शेविकों को भारी बहुमत मिला। मेंशेविकों, बुन्दवादियों और दक्षिणपन्थी समाजवादी क्रान्तिकारियों ने देखा कि अब उनके दिन बीत चुके हैं, इसलिए वे कांग्रेस से बाहर चले गये और उन्होंने ऐलान किया कि वे कांग्रेस के काम में हिस्सा लेने से इन्कार करते हैं। सोवियतों की कांग्रेस में उनका एक बयान पढ़ा गया, जिसमें उन्होंने अक्टूबर क्रान्ति को एक 'फ़ौजी षड्यन्त्र' बताया था। कांग्रेस ने मेंशेविकों और समाजवादी क्रान्तिकारियों की निन्दा की और उनके चले जाने पर अफ़सोस करना तो दूर, उसका स्वागत किया। कांग्रेस ने ऐलान

किया कि ग़द्दारों के चले जाने से अब वह मज़दूर और सैनिक प्रतिनिधियों की सच्ची क्रान्तिकारी कांग्रेस हो गयी है।

कांग्रेस ने ऐलान किया कि सारी सत्ता सोवियतों के हाथ में आ गयी है। सोवियतों की दूसरी कांग्रेस के घोषणापत्र में कहा गया :

"मज़दूरों, सैनिकों और किसानों के भारी बहुमत का समर्थन पाकर और पेत्रोग्राद में होने वाले मज़दूरों और सैनिकों के सफल विद्रोह का समर्थन पाकर, कांग्रेस अपने हाथ में सत्ता लेती है।"

26 अक्टूबर (8 नवम्बर) 1917 की रात को, सोवियतों की दूसरी कांग्रेस ने *शान्ति सम्बन्धी आज्ञप्ति* स्वीकार की। कांग्रेस ने युद्ध करने वाले देशों का आह्वान किया कि कम से कम तीन महीने के लिए सुलह कर लें, जिससे शान्ति की बातचीत की जा सके। कांग्रेस ने एक तरफ़ तो युद्ध करने वाले देशों की जनता और वहाँ की सरकारों से अपनी बात कही, दूसरी तरफ़ उसने "संसार के तीन प्रमुख राज्यों यानी ब्रिटेन, फ़्रांस और जर्मनी के वर्ग-चेतन मज़दूरों से" अपील की। उसने इन मज़दूरों से कहा कि वे "शान्ति के उद्देश्य को सफलता की मंज़िल तक ले जाने में और साथ ही सभी तरह की ग़ुलामी और शोषण से मेहनतकश और शोषित जनता की मुक्ति के उद्देश्य को सफलता की मंज़िल तक ले जाने में" मदद करें।

उसी रात को, सोवियतों की दूसरी कांग्रेस ने *भूमि सम्बन्धी आज्ञप्ति* स्वीकार की जिसमें कहा गया था : "भूमि पर ज़मींदारों की मिल्कियत बिना मुआवज़े के तुरन्त ख़त्म की जाती है।" खेती के इस क़ानून का आधार किसानों का एक निर्देश पत्र (नकाज, मैण्डेट) था, जो अलग-अलग जगहों के किसानों के 242 मैण्डेटों को मिलाकर बनाया गया था। इसके अनुसार, ज़मीन पर व्यक्तिगत मिल्कियत हमेशा के लिए ख़त्म कर दी गयी और उसके बदले सार्वजनिक या राज्य की मिल्कियत क़ायम हुई। ज़मींदारों, ज़ार के परिवार और मठों की ज़मीन बिना पैसा दिये हुए सभी मेहनतकशों को इस्तेमाल के लिए देने का हुक्म हुआ।

इस आज्ञापत्र से, किसानों ने अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति से 15 करोड़ देस्यातिन (40 करोड़ एकड़ से ऊपर) ज़मीन पायी जो पहले ज़मींदारों, पूँजीपतियों, ज़ार के परिवार, मठों और गिरजाघरों के पास थी।

इसके अलावा, किसानों को उस लगान से मुक्त कर दिया गया जो वे ज़मींदारों को देते थे और जो सालाना 50 करोड़ स्वर्ण रूबल होता था।

खनिज पदार्थों के तमाम साधन (तेल, कोयला, धातुएँ, वग़ैरह), जंगल और जलाशय जनता की सम्पत्ति हो गये।

अन्त में, सोवियतों की दूसरी अखिल रूसी कांग्रेस ने पहली सोवियत सरकार बनायी – जनकमिसारों की समिति बनायी जिसमें सभी बोल्शेविक थे। जनकमिसारों की पहली समिति के पहले सभापति लेनिन चुने गये।

इससे सोवियतों की दूसरी ऐतिहासिक कांग्रेस का काम ख़त्म हुआ।

कांग्रेस के प्रतिनिधि इधर-उधर बिखर गये, जिससे कि पेत्रोग्राद में सोवियतों की जीत

की ख़बर फैला दें और सोवियतों की सत्ता सारे देश में फैलाने का काम निश्चित करें।

हर जगह सोवियतों के हाथ तुरन्त ही सत्ता नहीं आ गयी। जब पेत्रोग्राद में सोवियत सरकार बन चुकी थी, तब मास्को में कई दिन तक डटकर और घनघोर लड़ाई होती रही। सत्ता मास्को-सोवियत के हाथ में न जाये, इसके लिए क्रान्ति-विरोधी मेंशेविक और समाजवादी क्रान्तिकारी पार्टियों ने ग़द्दारों और कैडेटों से मिलकर मज़दूरों और सैनिकों के ख़िलाफ़ हथियारबन्द लड़ाई शुरू कर दी। बाग़ियों को हराने और मास्को में सोवियतों की सत्ता क़ायम करने में कई दिन लग गये।

ख़ुद पेत्रोग्राद में और उसके कई ज़िलों में क्रान्ति की जीत के शुरू के दिनों में ही सोवियत सत्ता को ख़त्म करने की क्रान्ति विरोधी कोशिशें की गयीं। 10 नवम्बर 1917 को, केरेन्स्की ने, जो विद्रोह के समय पेत्रोग्राद से उत्तरी मोर्चे को भाग गया था, कई कज़्ज़ाक दस्ते इकट्ठा किये और जनरल क्रासनोव की कमान में उन्हें पेत्रोग्राद के ख़िलाफ़ भेजा। 11 नवम्बर 1917 को, एक क्रान्ति-विरोधी संगठन ने पेत्रोग्राद में कैडेटों से बग़ावत करायी। इस संगठन के नेता समाजवादी क्रान्तिकारी थे, और उसका नाम रखा था – "पितृभूमि और क्रान्ति के उद्धार की कमेटी"। लेकिन, बिना ज़्यादा कठिनाई के बग़ावत दबा दी गयी। एक ही दिन में, 11 नवम्बर की शाम तक, जहाज़ियों और रेड गार्डों के दस्तों ने कैडेट-विद्रोह दबा दिया और 13 नवम्बर को जनरल क्रासनोव पुलकोवो पहाड़ियों के पास हरा दिया गया। लेनिन ने व्यक्तिगत रूप से सोवियत-विरोधी बग़ावत दबाने का संचालन किया, जैसे उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अक्टूबर विद्रोह का संचालन किया था। उनकी अटूट दृढ़ता और विजय में उनके शान्त विश्वास ने जनता को प्रेरित और संगठित किया। दुश्मन कुचल दिया गया। क्रासनोव गिरफ़्तार कर लिया गया और उसने 'वचन दिया' कि सोवियत सत्ता के ख़िलाफ़ लड़ाई बन्द कर देगा। और, 'वचन देने पर' वह छोड़ दिया गया। लेकिन जैसाकि आगे मालूम हुआ, जनरल ने अपना वचन तोड़ दिया। जहाँ तक केरेन्स्की का सम्बन्ध था, वह औरत का भेष बनाकर 'किसी अज्ञात दिशा में ग़ायब' हो गया।

फ़ौज के जनरल हेडक्वार्टर पर, मोगीलेव में प्रधान सेनापति जनरल दुखोनिन ने भी बग़ावत करने की कोशिश की। जब सोवियत सरकार ने उसे हुक्म दिया कि जर्मन कमान से सुलह करने के लिए तुरन्त बातचीत चलाओ, तो उसने इन्कार कर दिया। इस पर, सोवियत सरकार के हुक्म से उसे हटा दिया गया। क्रान्ति विरोधी जनरल हेडक्वार्टर भंग कर दिया गया और ख़ुद दुखोनिन को उसके ख़िलाफ़ विद्रोह करने वाले सैनिकों ने मार डाला।

पार्टी के भीतर कुछ नामी-गिरामी अवसरवादियों – कामेनेव, ज़िनोवियेव, राइकोव, श्लियापनीकोव, वग़ैरह – ने भी सोवियत सत्ता के ख़िलाफ़ धावा बोला। उन्होंने माँग की कि एक 'संयुक्त समाजवादी सरकार' बनायी जाये, जिसमें मेंशेविक और समाजवादी क्रान्तिकारी भी शामिल किये जायें जिन्हें अक्टूबर क्रान्ति ने अभी-अभी परास्त किया था। 15 नवम्बर 1917 को, बोल्शेविक पार्टी की केन्द्रीय समिति ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें इन क्रान्ति-विरोधी पार्टियों के साथ समझौता करना नामंजूर कर दिया गया और कामेनेव तथा ज़िनोवियेव को

क्रान्ति का हड़ताल-तोड़क कहा गया।
17 नवम्बर को, पार्टी की नीति से असहमत होते हुए कामेनेव, ज़िनोवियेव, राइकोव और मिल्यूतिन ने ऐलान किया कि वे केन्द्रीय समिति से इस्तीफ़ा देते हैं। उसी दिन, 17 नवम्बर को, नोगिन ने अपनी तरफ़ से और जनकमिसार समिति के सदस्यों – राइकोव, वी. मिल्यूतिन, तियोदोरोविच, ए. श्लियापनीकोव, डी. रियाज़ानोव, यूरेनेव और लारिन – की तरफ़ से ऐलान किया कि वे पार्टी की केन्द्रीय समिति की नीति से असहमत हैं और जनकमिसार समिति से इस्तीफ़ा देते हैं। इन मुट्ठीभर ग़द्दारों के भाग खड़े होने से, अक्टूबर क्रान्ति के दुश्मनों के यहाँ ख़ुशियाँ मनायी जाने लगीं। पूँजीपति और उनके पिट्ठू ख़ुशी से फूलकर कहने लगे कि बोल्शेविज़्म ख़त्म हो गया और बोल्शेविक पार्टी जल्द ही समाप्त होने वाली है। लेकिन इन मुट्ठीभर ग़द्दारों की वजह से, पार्टी एक क्षण के लिए भी विचलित न हुई। पार्टी की केन्द्रीय समिति ने घृणा के साथ उन्हें क्रान्ति से भाग खड़े होने वाला और पूँजीपतियों का साझीदार कहकर उनकी निन्दा की और अपने आगे के काम में लग गयी।

जहाँ तक 'वामपन्थी' समाजवादी क्रान्तिकारियों का सवाल था, वे किसान जनता पर अपना असर बनाये रखना चाहते थे। किसानों की हमदर्दी निश्चित रूप से बोल्शेविकों के साथ थी। इसलिए, 'वामपन्थी' समाजवादी क्रान्तिकारियों ने फ़ैसला किया कि बोल्शेविकों से झगड़ा न करें और फ़िलहाल उनके साथ संयुक्त मोर्चा बनाये रहें। नवम्बर 1917 में, किसान सोवियतों की कांग्रेस हुई। उसने अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति से हासिल हुए सभी लाभ स्वीकार किये और सोवियत सरकार के आज्ञा-पत्रों का समर्थन किया। 'वामपन्थी' समाजवादी क्रान्तिकारियों के साथ एक समझौता हुआ और उनमें से कई को जनकमिसार समिति में जगहें दी गयीं (कोलेगायेव, स्पिरिदोनोवा, प्रोश्यान और स्टाइनबर्ग)। लेकिन, यह समझौता ब्रेस्ट-लितोव्स्क की सन्धि होने और ग़रीब किसानों की कमेटियाँ बनने तक ही क़ायम रहा। उसके बाद किसानों में गहरी दरार पड़ी। 'वामपन्थी' समाजवादी क्रान्तिकारी अधिकाधिक कुलक हित ज़ाहिर करने लगे। उन्होंने बोल्शेविकों के ख़िलाफ़ बग़ावत की और सोवियत सत्ता ने उन्हें परास्त कर दिया।

अक्टूबर 1917 से फ़रवरी 1918 तक, देश के विशाल प्रदेशों में सोवियत क्रान्ति इतनी तेज़ी से फैली कि लेनिन ने उसे सोवियत सत्ता की 'विजय-यात्रा' कहा।

महान अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति विजयी हुई।

रूस में समाजवादी क्रान्ति की इस अपेक्षाकृत आसान विजय के कई कारण थे। नीचे लिखे हुए मुख्य कारण ध्यान देने योग्य हैं :

(1) अक्टूबर क्रान्ति का दुश्मन अपेक्षाकृत ऐसा कमज़ोर, ऐसा असंगठित और राजनीतिक रूप से ऐसा अनुभवहीन था जैसेकि रूसी पूँजीपति। रूसी पूँजीपति आर्थिक रूप से अब भी कमज़ोर थे और पूरी तरह सरकारी ठेकों पर निर्भर थे। उनमें राजनीतिक आत्मनिर्भरता और पहलक़दमी इतनी न थी कि परिस्थिति से निकलने का रास्ता ढूँढ़ सकें। मसलन, बड़े पैमाने पर राजनीतिक गुटबन्दी और राजनीतिक दगाबाज़ी में उन्हें फ़्रांसीसी पूँजीपतियों का-सा तजुर्बा

न था, न अंग्रेज़ पूँजीपतियों की तरह, उन्होंने विशद रूप से सोचे हुए चतुर समझौते करने की शिक्षा पायी थी। हाल ही में, उन्होंने ज़ार से समझौता करने की कोशिश की थी। फ़रवरी क्रान्ति ने ज़ार का तख़्ता उलट दिया था और सत्ता ख़ुद पूँजीपतियों के हाथ में आ गयी थी लेकिन बुनियादी तौर से घृणित ज़ार की नीति पर ही चलने के सिवा उन्हें और कुछ न सूझ पड़ा। ज़ार की तरह, उन्होंने 'विजय तक युद्ध करने' का समर्थन किया, हालाँकि युद्ध चलाना देश की शक्ति से परे था और जनता तथा फ़ौज दोनों युद्ध से बुरी तरह चूर हो चुके थे। ज़ार की तरह, कुल मिलाकर वे भी रियासती ज़मीन बनाये रखने के पक्ष में थे, हालाँकि ज़मीन की कमी और ज़मींदारों के जुवे के बोझ से किसान मर रहे थे। जहाँ तक उनकी मज़दूर नीति का सम्बन्ध था, वे मज़दूर वर्ग से नफ़रत करने में ज़ार के भी कान काट चुके थे। उन्होंने कारख़ानेदारों के जुवे को बनाये रखने और मज़बूत करने की ही कोशिश नहीं की, बल्कि उन्होंने बड़े पैमाने पर तालाबन्दी करके उसे असहनीय बना दिया।

कोई ताज्जुब नहीं कि जनता ने ज़ार की नीति और पूँजीपतियों की नीति में कोई बुनियादी भेद नहीं देखा, और जो घृणा उसके दिल में ज़ार के लिए थी वही पूँजीपतियों की अस्थायी सरकार के लिए हो गयी।

जब तक समाजवादी क्रान्तिकारी और मेंशेविक पार्टियों का थोड़ा बहुत असर जनता पर था, तब तक पूँजीपति उन्हें पर्दे की तरह इस्तेमाल कर सकते थे और अपनी सत्ता बनाये रख सकते थे। लेकिन, जब मेंशेविकों और समाजवादी क्रान्तिकारियों ने ज़ाहिर कर दिया कि वे साम्राज्यवादी पूँजीपतियों के दलाल हैं और इस तरह जनता में उन्होंने अपना असर खो दिया, तब पूँजीपतियों और उनकी अस्थायी सरकार का कोई मददगार न रहा।

(2) अक्टूबर क्रान्ति का नेतृत्व रूस के मज़दूर वर्ग जैसे क्रान्तिकारी वर्ग ने किया। यह ऐसा वर्ग था जो संघर्ष की आँच में तप चुका था, जो थोड़ी ही अवधि में दो क्रान्तियों से गुज़र चुका था और जो तीसरी क्रान्ति के शुरू होने से पहले शान्ति, ज़मीन, स्वाधीनता और समाजवाद के लिए संघर्ष में जनता का नायक माना जा चुका था। अगर क्रान्ति का नेता रूस के मज़दूर वर्ग जैसा न होता, ऐसा नेता जिसने जनता का विश्वास पा लिया था, तो मज़दूरों और किसानों की मैत्री न होती और इस तरह की मैत्री के बिना अक्टूबर क्रान्ति की विजय असम्भव होती।

(3) रूस के मज़दूर वर्ग को क्रान्ति में ग़रीब किसानों जैसा समर्थ साथी मिला, जो किसान जनता का भारी बहुसंख्यक भाग था। जहाँ तक आम मेहनतकश किसानों का सवाल था, क्रान्ति के आठ महीनों का तजुर्बा बेकार नहीं गया। इस तजुर्बे की तुलना 'साधारण' विकास के बीसियों सालों के तजुर्बे से निस्सन्देह की जा सकती है। इन दिनों, उन्हें मौक़ा मिला कि वे अमल में रूस की तमाम पार्टियों को परख लें और अपनी दिलजमई कर लें कि न तो कान्स्टीट्यूशनल डेमोक्रेट और न समाजवादी क्रान्तिकारी या मेंशेविक ही ज़मींदारों से कोई गम्भीर झगड़ा मोल लेंगे, या किसानों के हित के लिए अपना बलिदान करेंगे, कि रूस में एक ही पार्टी है – बोल्शेविक पार्टी – जिसका ज़मींदारों से कोई सम्बन्ध नहीं है

और जो उन्हें किसानों की ज़रूरतें पूरी करने के लिए कुचलने को तैयार है। सर्वहारा और ग़रीब किसानों की मैत्री का यह दृढ़ आधार था। मज़दूर वर्ग और ग़रीब किसानों की इस मैत्री के क़ायम होने से, मध्यम किसानों की गति निश्चित हो गयी। ये मध्यम किसान बहुत दिन तक ढुलमुल रहे थे और अक्टूबर विद्रोह के शुरू होने से पहले ही पूरी तरह क्रान्ति की तरफ़ आये थे और उन्होंने ग़रीब किसानों से नाता जोड़ा था।

कहना न होगा कि इस मैत्री के बिना अक्टूबर क्रान्ति विजयी न होती।

(4) मज़दूर वर्ग का नेतृत्व राजनीतिक संघर्षों में तपी और परखी हुई बोल्शेविक पार्टी जैसी पार्टी ने किया था। बोल्शेविक पार्टी इतनी साहसी पार्टी थी कि निर्णायक हमले में जनता का नेतृत्व कर सके। वह इतनी सावधान पार्टी थी कि मंज़िल की तरफ़ जाने के रास्ते में ढँकी-मुँदी खाई-खन्दकों से बचकर निकल सके। ऐसी ही पार्टी विभिन्न क्रान्तिकारी आन्दोलनों को चतुराई से एक ही सामान्य क्रान्तिकारी धारा में मिला सकती थी। शान्ति के लिए आम जनवादी आन्दोलन, जातीय स्वाधीनता और जातीय समानता के लिए पीड़ित जातियों का आन्दोलन और पूँजीपतियों का तख़्ता उलटने के लिए और सर्वहारा अधिनायकत्व क़ायम करने के लिए सर्वहारा वर्ग का समाजवादी आन्दोलन – इन सबको ऐसी ही पार्टी एक सामान्य क्रान्तिकारी धारा में मिला सकती थी।

इसमें सन्देह नहीं कि इन विभिन्न क्रान्तिकारी धाराओं के एक ही सामान्य शक्तिशाली क्रान्तिकारी धारा में मिलने ने रूस में पूँजीवाद की तक़दीर का फ़ैसला कर दिया।

(5) अक्टूबर क्रान्ति ऐसे समय आरम्भ हुई जबकि साम्राज्यवादी युद्ध अभी ज़ोरों पर था, जबकि प्रमुख पूँजीवादी राज्य दो विरोधी खेमों में बँटे हुए थे और जब परस्पर युद्ध में फँसे रहने और एक-दूसरे की जड़ें काटने में लगे रहने से, वे 'रूसी मामलों' में सफलता से दख़ल न दे सकते थे और सक्रिय रूप से अक्टूबर क्रान्ति का विरोध न कर सकते थे।

निस्सन्देह, अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति की जीत में इस बात से बहुत मदद मिली।

('बिगुल', फ़रवरी 1998 और मार्च-अप्रैल '98 में धारावाहिक प्रकाशित)

• • •